हमारी संस्कृति, हमारी धरोहर

मिट्टी के खिलौने

डॉ. हृदय गुप्त

आर्थिक सहयोग द्वारा प्रकाशित
लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान
(संस्कृति विभाग, उ.प्र. का स्वायत्तशासी संगठन)
लखनऊ

डॉ. हृदय गुप्त
मिट्टी के खिलौने

हमारी संस्कृति, हमारी धरोहर

मिट्टी के खिलौने

(विशेष संदर्भ : कानपुर के खिलौने)

डॉ. हृदय गुप्त
ललित कला विभाग
डी.ए–वी. कालेज, कानपुर (उ.प्र.)
(छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर)

आर्थिक सहयोग से प्रकाशित
लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान
संस्कृति विभाग, उ.प्र. शासन का लखनऊ स्वायत्तशासी संगठन, लखनऊ

प्रकाशक
साहित्य रत्नालय
गिलिस बाजार, कानपुर - 208001

लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान (संस्कृति विभाग, उ0प्र0 शासन का स्वायत्तशासी संगठन) लखनऊ के द्वारा आर्थिक सहयोग से प्रकाशित।

प्रथम संस्करण – 2020
(प्रतियाँ 1100)

मिट्टी के खिलौने

ISBN 978-93-89621-04-4

मूल्य : 300/– रुपये मात्र

© सर्वाधिकार लेखक के अधीन

प्रकाशक
साहित्य रत्नालय
गिलिस बाजार, कानपुर –208001
दूरभाष : (0512) 2353589
email : triamitabh@yahoo.co.in

लेजर कम्पोजिंग
रेखा गुप्ता
जे.एम.डी.ग्राफिक्स, कानपुर –208002
दूरभाष : 9936703116

मुद्रक
अजीत आफसेट
रामबाग, कानपुर–208012
दूरभाष : 9935010100

समर्पण

बहन

सावित्री देवी गुप्ता

गायत्री देवी गुप्ता

को

आदर सहित

समर्पित

अनुक्रम

क्र.सं.	विषय	पृ.सं.
1.	परिचय	1
2.	लोककला और खिलौना	6
3.	कुम्हार (शिल्पकार)	9
4.	खिलौनों का इतिहास	11
5.	भारत के राज्य और खिलौना	34
6.	खिलौना बनाने की विधि	40
7.	खिलौना पकाने की विधि	42
8.	खिलौनों में रंगांकन	43
9.	विपणन	45
10.	कानपुर के खिलौने	46
11.	खिलौनों की विशेषता	51
12.	निष्कर्ष	87
	छाया चित्र	91
	सन्दर्भ ग्रन्थ	136

मन की बात

उत्तर प्रदेश में मिट्टी के खिलौने बनाये जाने की गौरवशाली परम्परा है, इसी क्रम में कानपुर में परम्परागत खिलौने बनाये जाने की विकसित शैली है। यहाँ पर निर्मित खिलौने अन्य स्थानों से भिन्न लोकाकारों से युक्त, सहज व सरल मनभावन रूप के होते हैं। इन खिलौनों की सहजता मन को स्पर्श कर, आनन्दित करती है।

किसी भी राष्ट्र की कला एवं संस्कृति, वहाँ के समाज का दर्पण होती है, सामाजिक दायित्वों, रीति–रिवाजों, त्योहार एवं उत्सव आदि में इनका प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखाई देता है।

कानपुर एक पौराणिक, ऐतिहासिक एवं औद्योगिक शहर है, गंगा तट पर बसे होने के कारण धर्मभीरुता यहाँ के लोकजन के अन्र्तमन में व्याप्त है। यहाँ नागरिक सामाजिक एवं धार्मिक परम्पराओं का निर्वहन बड़ी सहृदयता के साथ करता हैं, यहाँ का जनमानस तीज–त्योहार, रीति–रिवाज, संस्कार, उत्सव पर्व एवं मेलों आदि को मन के आन्तरिक भाव से मनाते हैं, विशेष रूप से होली, दीपावली, दशहरा, नवरात्रि एवं कृष्ण जन्माष्टमी आदि।

कानपुर की लोक–संस्कृति के तीज–त्योहारों में मिट्टी के खिलौनों का महत्व सर्वोपरि है। ये धार्मिक–परम्परा एवं सामाजिक जीवन के अंग हैं। यहाँ खिलौनों का प्रयोग सजाने तथा खेलने के लिए किया जाता है। लोककला के आत्म–स्वरूप ये खिलौने अब लुप्तप्राय है। इनका बनना, अब न के बराबर रह गया है। बढ़ते शहरीकरण, समयाभाव, भागदौड़ की आपाधापी, आर्थिक प्रतिस्पर्धा की दौड़ और प्लास्टिक उत्पादों की भरमार ने इस लोक विद्या को समाप्त करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है परन्तु कुछ शिल्पकारों/कुम्हारों ने इस विधा को आर्थिक–सामाजिक स्थितियों से जूझते हुए भी जीवित रखा है तथा अपनी पारम्परिक विरासत को संजोय हुए हैं, लेकिन उनका यह भी मानना है कि आने वाली पीढ़ी के सुनहरे सपने इस कला से पूर्ण नहीं हो सकते हैं इसलिए वह अपने

बच्चों को अन्य रोजगार में जाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। इन परिस्थितियों से इस लोक–विरासत पर खतरे का आभास हो रहा है। पर्यावरण की दृष्टि से उपयुक्त इस कला को यदि सरकारी अथवा गैर सरकारी रूप से संरक्षित न किया गया तो यह संग्रहालय की वस्तु बनकर रह जायेगी और आने वाली पीढ़ियों का इससे साक्षात्कार न हो सकेगा।

कानपुर की लोक विरासत के प्रतिरूप, इन खिलौनों के प्रति अगाध प्रेम ने, मुझे इस लोककला विधा पर लिखने के लिए प्रेरित किया। खिलौने के प्रति मेरा लगाव एवं रुचि बचपन से ही रही है, मिट्टी के खिलौने सदैव मुझे आकर्षित करते रहे हैं। बाल्यकाल अवस्था से अपनी सांस्कृतिक विरासत एवं परम्पराओं की ओर मेरा रुझान रहा है, इसके प्रत्यक्ष उदाहरण लोककला से आत्मिक लगाव व खिलौने एवं लोकचित्रों के प्रति अगाध प्रेम है। खिलौनों में सर्वाधिक मिट्टी एवं काष्ठ के रूपाकार मुझे प्रेरित करते हैं, इनके सरल रूप, स्वाभाविक चटक रंग एवं सतरंगी प्रभाव को देखकर मैं इन्हें एकटक निहारता रहता हूँ। जब कभी मेला या त्योहारी बाजार मोहल्ले में लगती, तब वहाँ जाकर खिलौनों को देख, मन झंकृत हो, मचल उठता, मुझे नैसर्गिक आभास होता कि यह मुझे अपने पास बुला रहे हैं, साथ ले चलने की ज़िद कर रहे हैं। इन्हें खरीदने के पश्चात् जो आत्म संतुष्टि, आनन्द का भाव, संतोष का आभास एवं खुशी की अनुभूति का मिलाजुला प्रभाव अन्तर्मन को होता, उसको शब्दों में बयां करना या उसका इज़हार करना शायद मेरे बस की बात नही है। तीज–त्योहारी बाजार अथवा मेलों में जहाँ उसका विक्रय होता है। वहाँ मैं उन्मत की भाँति इनके इर्द–गिर्द मंडराता रहता, कई–कई चक्कर लगाता, स्कूल जाता, वापस आता, बस्ता फेंक जल्द से खिलौनों की दुकान पहुँच जाता व इन्हें निहारता रहता और इन्हें खरीदने के लिए अधीर हो उठता। सभी खिलौने तो खरीद नहीं सकता था तथापि चुपके से अपने एकत्र किए हुए, गुल्लक के पैसे, गुल्लक तोड़कर निकालता और अपनी पसंद के कतिपय खिलौने खरीद लाता तथा छिपा देता, जिससे घर वालों को पता न चले तथा मुझे डाँट न पड़े। बाद में अम्मा–बप्पा (माता–पिता) से जिद कर, पैसे लेकर और खिलौने खरीद लाता। इनसे मेरा मन कभी न भरता, इन्हें अधिकाधिक खरीदने की कोशिश करता रहता। इस प्रकार बाल्यमन की अभिलाषा ने मुझे इनका संग्रहकर्ता और इनका संरक्षणकर्ता बना दिया।

मेरा परिवार धार्मिक विचारों एवं संस्कारों वाला रहा है। भारत के अधिकांश धार्मिक स्थलों की यात्रा करने का सौभाग्य, मुझे बचपन में प्राप्त हुआ है। मैं अपने

परिवार के साथ जब किसी धार्मिक स्थल पर जाता तब मेरे मन में बस एक प्रश्न प्रस्फुटित होता रहता, क्या यहाँ पर मुझे खिलौने या लोक शिल्प खरीदने का अवसर प्राप्त होगा। वहाँ पहुँचकर, दर्शन करने के उपरान्त बाज़ार घूमते समय, मेरी नज़र बस स्थानीय लोक–निधियों को तलाशती और जहाँ भी यह दिखाई देती, बजट अनुरूप इन्हें अवश्य खरीदता।

मेरे स्वयं के पास इस समय लगभग 1500 खिलौनों का संग्रह है, जिसमें मेरे पिता जी के समय यानि 70 वर्ष पूर्व के खिलौने भी हैं। इन खिलौनों की मरम्मत एवं रखरखाव तथा इन्हें ठीक प्रकार से संजोने में, मेरे पूरे परिवार का सहयोग रहता है।

बचपन का ये खिलौना प्रेम, वर्तमान में भी मेरे अन्तर्मन में व्याप्त है। बचपन में खरीदी गयी लोककला निधियों का संग्रह, आज भी सुरक्षित है। जाने–अनजाने खरीदे गये, खिलौनों का मूल्य, इतना अमूल्य होगा, ये मुझे अब पता चलता है। मैंने इनके विषय में अनेक जानकारी जैसे–ऐतिहासिक संदर्भ, बनाने की तकनीक, उपयोग, विशेषता, उपयोगिता, सामग्री एवं रंगांकन आदि को एकत्र कर, प्रकृत पुस्तक को लिखने के रूप में एक छोटा सा प्रयास है। कानपुर की यह लोक निधि के पर्यावरण की रक्षक एवं लोक संस्कृति की प्रतीक है। मेरा उद्देश्य है कि इन खिलौनों से जन–जन रू–ब–रू हो और इन्हें पुनर्जीवित करने का प्रयास करे।

प्रस्तुत पुस्तक को लिखने में सहयोग करने हेतु मैं श्री बाल गोविन्द, बंशीधर, के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ तथा श्रीमती रेखा गुप्ता, अनिल कुमार, राजीव , संदीप कुमार, विवेक कुमार, पवन कुमार व ज्ञान प्रकाश गुप्ता आदि को भी धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पुस्तक लिखने में सहयोग दिया है। श्री ओ.पी. त्रिपाठी, डॉ. ए.के. सिन्हा (विभागाध्यक्ष, संस्कृत, डी.ए–वी. कालेज, कानपुर) द्वारा खिलौनों पर पुस्तक लेखन पर उत्साहवर्धन हेतु एवं श्री गोपाल खन्ना को छायाचित्र उपलब्ध कराने हेतु विशेष आभार व्यक्त करता हूँ तथा इन खिलौनों की रचना करने वाले शिल्पकार (कुम्हार) समुदाय को कोटि–कोटि सादर अभिवादन करता हूँ जिन्होंने इस लोक विरासत की विस्तृत जानकारी दी है तथा इस सांस्कृतिक परम्परा को सुरक्षित रखे हुए है। इस पुस्तक को लिखने में पत्नी श्रीमती सोना गुप्ता एवं पुत्र कलांकुर राज गुप्ता का विशेष सहयोग रहा है।

इस पुस्तक के प्रकाशन हेतु 'लोक एवं जनजाति कला एवं संस्कृति संस्थान', लखनऊ एवं इस संस्थान के निदेशक डा. योगेन्द्र प्रताप सिंह का विशेष आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके आर्थिक सहयोग से इस पुस्तक का प्रकाशन संभव हो सका है। इस

प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक का भी हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिनके रचनात्मक सहयोग से इस पुस्तक का प्रकाशन सम्भव हुआ है।

इस पुस्तक में मैंने स्थानीय क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग किया है जिससे इन खिलौनों के आत्म स्वरूप को ठीक प्रकार से समझा जा सके। प्रस्तुत पुस्तक में खिलौना शब्द का प्रयोग यथास्थान दिया गया है, यहाँ खिलौना का तात्पर्य मिट्टी के खिलौनों से ही है।

आशा है आप अपने बहुमूल्य व सार्थक विचारों तथा सुझावों से अवगत करायेंगे एवं मेरा ज्ञानवर्धन करेगें।

डॉ. हृदय गुप्त

• एस–102, सनराइज अपार्टमेन्ट 2ए/416,
आजाद नगर, कानपुर–208002

• 2/414, नवाबगंज, कानपुर–208002(उ.प्र.)

18/06/2020

डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह
निदेशक
लोक एवं जनजाति कला एवं
संस्कृति संस्थान, लखनऊ

प्राक्कथन

प्राचीन काल से मानव प्राकृतिक शक्तियों की उपासना–वंदना करता चला आ रहा है, प्रकृति को ईश्वर का साक्षात् रूप मानकर, सदैव पूजित किया है और प्राकृतिक शक्तियों एवं जीवन की दिनचर्या को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है। आदि मानव ने गुफाओं से निकलकर जंगली और मैदानी भू–भागों में बटकर, अपना आशियाना बनाया तदुउपरान्त भी लोक देवी –देवता की पूजा–अर्चना का निरंतर क्रम चलाता रहा है। इस प्रकार मैदानी भू–भाग में लोक कलाओं तथा जंगली स्थानों में जनजातीय कलाओं की उत्पत्ति का आधार बनी।

भारतवर्ष में विभिन्न संस्कृतियों का समागम है तथा कलाओं के विभिन्न आयाम है। यह कलाएँ पारम्परिक से आधुनिक एवं लोक से जनजातीय है। इन कलाओं का अविरल–क्रम वर्तमान में भी स्थापित है। इसी क्रम में उत्तर प्रदेश का लोक एवं जनजातीय कलाएँ हैं।

उत्तर प्रदेश का जनमानस धर्म–कर्म में आस्था व विश्वास रखता है और लोक–देवी देवता की विभिन्न अवसरों पर पूजा करता है। यहाँ के निवासी इनके पूजन हेतु लोक चित्र तथा लोक मूर्तियों की रचना करते हैं। इस प्रकार लोक कलाओं व जनजातीय कलाओं की परम्परा सामाजिक मूल्यों के लिए आवश्यक तत्व बन गयी। इन्हीं लोक कलाओं के विभिन्न आयामों में से एक मिट्टी के खिलौना बनाने की कला है जो अब प्रायः लुप्त होने की स्थिति में है। इन्हें संरक्षित करने के उद्देश्य से डॉ. हृदय गुप्त ने इस पुस्तक को लिखने का सराहनीय कार्य किया है।

लोक एवं जनजाति कला एंव संस्कृति संस्थान, लखनऊ (उत्तर प्रदेश) की

लोक एवं जनजाति कलाओं के संरक्षण एवं उन्नयन के लिए प्रतिबद्ध है। इसी क्रम में प्रस्तुत पुस्तक 'हमारी संस्कृति—हमारी धरोहर, मिट्टी के खिलौने' के प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में भारतीय मिट्टी के खिलौनों के विभिन्न आयामों पर चर्चा की गयी है तथा इस पर समग्रता से प्रकाश डाला गया है।

आशा है भारतीय लोक कलाओं के प्रति रुचि रखने वाले शोधार्थियों, कला प्रेमियों एवं जिज्ञासुओं के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पुस्तक के लेखक बधाई के पात्र है।

(डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह)

10/10/2020

भूमिका

उत्तर प्रदेश में मिट्टी के खिलौने भारतीय संस्कृति की अनुपम छटा भारतीय समाज के संश्लिष्ट व्यवहारों में देखी जा सकती है। बाहर से देखने वाला व्यक्ति कई बार संस्कृति के उन विशिष्ट तत्वों को देख नहीं पाता जो उनकी कल्पना ओर अनुभविक बोध से परे है।

औपनिवेशिक ज्ञान प्रसार के लाभ अनेक रहे हैं। किंतु सर्वाधिक नुकसान यह रहा है कि हम पारंपरिक कला, स्थापत्य और रीति रिवाजों के प्रति दुराग्रही हो गये। यद्यपि हजारों वर्षों की परंपरा में इतिहास इस बात का साक्षी है कि हम नवाचारों को अन्वेषित, अविष्कृत और अपनाने में कभी पीछे नहीं रहे हैं चाहे वह भारत की देशज हो अथवा बाल प्रभाव से युक्त हो। भारतीय शिल्प कला और स्थापत्य भारत के सामाजिक जीवन का न केवल सौंदर्य विधायी पक्ष है अपितु वह समाज जीवन से गहरे जुड़कर उसके सांस्कृतिक उपादान तक की स्थिति को प्राप्त कर चुके हैं। इसलिए लोक कलाएँ भारतीय जन–जीवन के तीज त्यौहारों से जुड़कर उनके लिए अपरिहार्य हो जाती है और उनकी सांस्कृतिक अस्मिता के परिचायक हो जाती है। मिट्टी के खिलौनों की भी यही स्थिति है। हाट–मेलों के अतिरिक्त कृष्णजन्माष्टमी, दशहरा व दीपावली के अवसर पर मिट्टी के खिलौनों का महत्व अति महत्वपूर्ण है। ये मिट्टी के खिलौने बच्चों के लिए न केवल उनके कौतुहल और मनोरंजन की सामग्री है बल्कि बड़ो के लिए और घर के लिए सजावटी समान के अतिरिक्त शुभ और मंगल के प्रतीक हैं। जनसमुदाय की मंगलाकांक्षा से जुड़कर यह कला जन–जीवन से और गहरे जुड़ जाती है। यही कारण है कि आज तकनीकी युग में भी प्लास्टिक और इलेक्ट्रानिक खिलौने पूर्णतया इनको स्थानापन्न नहीं कर सके हैं और मंगलाशा के प्रतीक, ये मिट्टी के खिलौने त्योहारों आदि पर्वो पर अपरिहार्य हो जाते हैं।

जन–जीवन का लालित्य इन लोक कलाओं में छिपा हुआ है। मिट्टी एवं

प्रस्तर से निर्मित मूर्तियाँ भारत में ईश्वर का गौरव प्राप्त कर पूजनीय हो जाती हैं। मृण्मय मूर्ति प्राण प्रतिष्ठित होकर प्रतिमा बन जाती है। भारत की अध्यात्म साधना से अभिभूत होकर मूर्ति कला जन–जीवन में लौकिक और अलौकिक के बीच सेतु का कार्य करती है और जीवन की लोकोत्तर साधना की ओर संकेत देती है। इसलिए मिट्टी के खिलौने भारत की भावात्मक साधना से संश्लिष्ट रूप से जुड़े हैं।

शिशु और बाल मन के भावात्मक एवं बौद्धिक विकास में खिलौने बड़े सहयोगी होते हैं। भारतीय समाज के अकिंचन वर्ग में जिनके लिए मंहगे, खिलौने अभी भी कल्पना से परे हैं, वहाँ अभावों का भावों से भरने का एकमात्र साधन है मिट्टी के खिलौने। वर्तमान समाज के अस्मिता बोध ने विभिन्न पारंपरिक कलाओं की ओर लोगो को सोचने हेतु उन्मुख किया है, इस कारण से भी लोगों की दृष्टि इस ओर पड़ी है। इस रूप में मिट्टी के खिलौनों पर लिखना एक गंभीर सांस्कृतिक कर्म है। यह ठीक है कि आज के इलेक्ट्रानिक खिलौनों के युग में ये खिलौने बालमन के कुछ अनुकूल न हों और कुछ अप्रासंगिक प्रतीत हो किंतु मिट्टी के ये खिलौने मात्र खिलौने नहीं है, ये भारत के पारंपरिक समाज की कलाचेतना के आद्य प्रतीक हैं, इन्हें किसी भी कीमत पर बचाए रखना वस्तुतः भारतीय संस्कृति के बीज को सुरक्षित रखना है। इसलिए इस विषय पर लेखन कार्य अपरिहार्य है।

कलाविद् डॉ. हृदय गुप्त स्वभाव से ही कलान्वेषी हैं, जनसमुदाय की दृष्टि से वर्तमान में ओझल हो रहीं लोककलाओं पर लिखना डॉ. हृदय गुप्त का रोचक विषय है। पारंपरिक मिट्टी के खिलौने पर लिखकर इन्होंने भारतीय समाज के लिए उपकार का कार्य किया है। यह पुस्तक संदर्भित अर्थ में बहुत उपयोगी है।

Mo. : 9415050808
singhypdr@gmail.com
www.shodh.net

प्रो. योगेन्द्र प्रताप सिंह
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

15×17×6 सेमी. राम दरबार, लखनऊ (उ.प्र.) 2018

17 सेमी. साधू, कृष्ण नगर (पश्चिम बंगाल) 2010

26 सेमी. दशावतार (मदुरै, तमिलनाडु) 2014

20 सेमी. श्री कृष्ण जी मधुवन में 1987

15 सेमी. दुर्गा जी 1995

28 व 27 सेमी. राधा-कृष्ण 2003

19 सेमी. ग्वालिन 1981

17 सेमी. बऊआ 1993

1

परिचय

खिलौना बच्चों की सतरंगी दुनिया है, यह बच्चों को विशेष प्रिय है। वह इनसे खेलते हैं और अपना मनोरंजन करते हैं तथा इन्हें घर पर सजाते हैं। यह शिक्षा प्रधान होते हैं, बालक इनके माध्यम से विविध ज्ञान व शिक्षा प्राप्त करते हैं। खिलौनों द्वारा बच्चों का मानसिक एवं शारीरिक विकास होता है तथा साथ ही सामाजिक, ऐतिहासिक और पौराणिक जन–जागृति का ज्ञान प्राप्त होता है। यह किसी भी रूप अथवा माध्यम के हों उनको अच्छे लगते हैं। मेलों तथा त्योहारी बाज़ारो में बच्चों का सर्वाधिक आकर्षण खिलौनों को खरीदने में रहता है। खिलौने मेलों तथा त्योहारी बाज़ारों के अतिरिक्त धार्मिक स्थलों, ऐतिहासिक–पौराणिक स्थानों पर भी विक्रीत होते हैं। खिलौने किसी भी लोकाकार के हों, बच्चों के साथ–साथ युवा एवं बड़े–बुजुर्ग सभी को आकर्षित करते हैं। यह घर के अन्दर खेलने का सबसे अच्छा माध्यम है। सम्पूर्ण दुनिया में खिलौनों का विकास एक साथ हुआ है।

खिलौने विभिन्न माध्यम–मिट्‌टी, कपड़े, मूँज, कागज–कुट्‌टी, धातु, पत्थर, काष्ठ एवं प्लास्टिक आदि के बनाये जाते हैं, परन्तु सबसे अधिक लोकप्रिय व प्रचलित माध्यम मिट्‌टी के खिलौनें होते हैं। यह हस्तनिर्मित होते हैं। कुम्हार हाथ की जादुई कारीगरी द्वारा कठिन परिश्रम कर इन्हें रचते हैं। वह पलभर में हाथों एवं साँचों के प्रयोग से अनेक प्रकार के सहज व सरल रूपों को बना देते हैं। कुम्हार समाज की आवश्यकता के अनुरूप इनको सृजित करते हैं। वह समाज की लोक–परम्पराओं का अनुशीलन कर, लोक–कथाओं, धार्मिक–कथाओं, पौराणिक –गाथाओं, ऐतिहासिक सन्दर्भ के कथानकों के दृश्यानुसार, इन्हें रूप प्रदान करते हैं तथा सामाजिक सरोकारों के दृश्यों एवं तीज–त्यौहार में उपयोग किये जाने वाले खिलौनों का निर्माण करते हैं। कुम्हार इस प्रकार से अपने धार्मिक एवं सामाजिक दायित्व की पूर्ति करते हैं और समाज में अपनी उपयोगिता को सिद्ध करते हैं, इसके

साथ–साथ कुम्हार इन खिलौनों का विपणन यानि इनकी बिक्री अथवा व्यापार स्वयं करते हैं और बाज़ार से सीधा सम्पर्क रखते हैं।

भारतीय समाज के प्रत्येक परिवार में मिट्टी के खिलौनों से लगाव होना स्वाभाविक है, वह किसी धर्म, सम्प्रदाय के हो, खिलौने उनकी पहली पसन्द हैं। यहाँ यह सर्वविदित है कि खिलौने भारतीय परम्परा का अभिन्न अंग है, आवश्यकतानुसार इनका प्रयोग तीज–त्यौहार एवं पूजन तथा गृहशोभा हेतु किया जाता है। खिलौने प्रत्येक वर्ष नये–नये खरीदे जाते हैं, टूटते हैं, तत्पश्चात् जोड़े जाते हैं, यह क्रम सदियों से चलता चला आ रहा है। बहुत से भारतीय परिवारों में इन्हें संकलित करने का भी रिवाज़ है।

खिलौनों का महत्व भारतीय जनजीवन में कितना है। यह भारतीय सिनेमा उद्योग में गाये हुए गीतों (गानों) से पता चलता है। खिलौनों पर अनेक गीतों की रचना हुई और वह प्रसिद्ध भी हुए। इन गीतों के माध्यम से गीतकार ने खिलौनों के प्रति मानवीय संवेदनाओं के मर्म को अभिव्यक्त किया है।

'दिल का खिलौना हाय टूट गया, कोई लुटेरा आ के लूट गया' (गूँज उठी शहनाई, 1959)

'तूने खूब रचा भगवान खिलौना माटी का, जिसे कोई न सका पहचान खिलौना माटी का' (नागमणि, 1957)

'खिलौना जानकर तुम तो, मेरा दिल तोड़ जाते हो' (खिलौना, 1970)

'आया रे खिलौने वाला, खेल खिलौने लेके आया रे' (बचपन, 1970)

'बस यही अपराध मैं हर बार करता हूँ, आदमी हूँ आदमी से प्यार करता हूँ एक खिलौना बना गया दुनिया के मेले में, कोई खेले भीड़ में कोई अकेले में' (पहचान, 1970)

'दिल आज शायर है, गम आज नगमा है, शब ये ग़ज़ल है सनम गैरों के शेरों को ओ सुनने वाले, हो इस तरफ भी करम, ये प्यार कोई खिलौना नहीं है, हर कोई ले जो खरीद, मेरी तरह जिन्दगी भर तड़प ले, फिर आना मेरे करीब' (गैम्बलर, 1970)

इन गीतों से खिलौना का जनमानस से आत्मीय लगाव प्रदर्शित हो रहा है। खिलौने मानव जीवन के अभिन्न अंग के रूप में जन्म–जन्मान्तर से जुड़े हुए हैं।

खिलौने लोक शैलीगत होते हैं। भारत के प्रत्येक राज्य, जनपद या अंचल में निर्मित खिलौनों की बनावट में स्थानीय प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। यह उस क्षेत्र की परम्परा के अनुरूप बनाये जाते हैं। इस प्रकार से खिलौने के आकार, रूप, रंग, बनावट में क्षेत्रीय विशिष्टता का दर्शन स्वाभाविक है। यह सर्वविदित है कि भारत में मिट्टी के खिलौने, मूर्तियाँ, पात्र एवं अन्य उपयोगी बनाने की समृद्धशाली परम्परा रही है। भारत के प्रत्येक राज्य में कुशल कुम्हार स्थानीय शैली के अनुरूप, अनेक प्रकार की वस्तुओं का सृजन करते हैं। इसी क्रम में वह विभिन्न शैलियों के खिलौने भी परम्परानुसार बनाते हैं। यह खिलौने बच्चों के खेलने से लेकर गृहसज्जा तक के लिए उपयुक्त होता है। इन खिलौनों की गढ़नशीलता में सादगी तथा सरलता का अद्भुत समन्वय होता है। इन पर चटक एवं चमक प्रधान रंगों का प्रयोग किया जाता है। इनके विषय पौराणिक–धार्मिक आख्यानों, सामाजिक जीवन–दर्शन, दिनचर्या, खेल दृश्य, संगीत–नृत्य दृश्य, पशु–पक्षियों की आकृतियाँ, रसोई के बर्तन (चूल्हा–चकिया) एवं गुड़िया–गुड्डा आदि होते हैं।

यह खिलौने मिट्टी के होने की वजह से तथा रख–रखाव में असावधानी के कारण टूटते रहते हैं और फिर नये बने खरीदे जाते हैं। यह बनने व टूटने का क्रम सदियों से इसी प्रकार चलता चला आ रहा है।

प्राचीन समय में भारतीय खिलौनों को **'पोत्थकम'** व **'लेप्यकम'** कहा जाता था। खिलौने नवपाषाण काल से वर्तमान तक अनवरत प्रचलित हैं। इनके सृजन की परम्परा निरंतर विद्यमान है। इनकी उपयोगिता एवं सार्थकता में कोई कमी नहीं आयी है।

पकी मिट्टी के खिलौनों के साथ–साथ पात्र (बर्तन), विभिन्न सजावटी वस्तुएँ एवं मृण्मय मूर्तियाँ आदि भी बनायी जाती है। पकी हुई मिट्टी के विभिन्न उपयोगी वस्तुओं एवं पात्रों जैसे–दियाली, सकोरा, सुराही, मटकी, मटका, कलश, हुन्डा, गमला, ईंट एवं खपरैल आदि को जो इनके नाम होते हैं, इन्हें इन्हीं नाम से पुकारा जाता है। इन्हें 'टेराकोटा' कहकर नहीं सम्बोधित करते हैं।

टेराकोटा प्रायः मृण्मूर्तियों एवं कलात्मक तथा सजावटी वस्तुओं को कहा

जाता है। 'टेराकोटा' मृण्मूर्तियाँ अथवा वस्तुएँ बिना रंगी अर्थात् धूमैली, काली, गहरी गुलाबी, लाल एवं भूरी रंग की होती है। प्राचीन काल मे ंइसी प्रकार की मृण्मूर्तियाँ, खिलौने एवं पात्र प्राप्त हुए हैं। मृण्मूर्तियों एवं खिलौनों का अपना–अपना महत्व है। प्रायः मृण्मूर्तियाँ प्राकृतिक पकी मिट्टी के रंग की होती है तथा खिलौनो को पकाकर रंगांकन किया जाता है।

यहाँ पर खिलौने और मूर्तियों में भेद समझना आवश्यक है। मूर्तियाँ लघुकार से वृहद्‌ाकार की बनायी जाती है, वहीं खिलौने लघु प्रारूप में बनते हैं। मूर्तियों के रंगांकन में Üृंगार आवश्यक तत्व है और खिलौनों को सहज रूप में रंगा जाता है। अधिकांश मूर्तियाँ देव रूपों की होती है तथा खिलौनों के चरित्र धार्मिक कथा–कहानियों, गाथाओं, सामाजिक तथ्यों एवं पर्व, रीति–रिवाज, त्योहार पर आधारित बनाये जाते हैं। मूर्तियाँ पूजन–विधान, अनुष्ठान, चढ़ावा एवं सजाने के उपयोग में लायी जाती है और खिलौने खेलने व सजाने के कार्य में आते हैं। मूर्तियाँ प्रायः यथार्थपरक बनायी जाती हैं तथा खिलौने सरल रूपों में अर्ध–यथार्थ आकारों में बनाये जाते हैं। मूर्तियाँ शैलीगत विशेषता पर आधृत होती है और खिलौने लोकाकारों से सुसज्जित होते हैं। भारतीय लोक–संस्कृति में खिलौनों का महत्त्व सर्वोपरि है। प्राचीन समय में बिना रंगी हुई लघु आकार वाली मूर्तियों को खिलौना कहा गया जिसके अन्तर्गत पशु–पक्षी की आकृतियाँ एवं सामाजिक विषयों से युक्त मानव आकृतियाँ आदि थी।

खिलौने प्रायः मिट्‌टी से बनाये जाते हैं। यह माध्यम इतना सरल, सस्ता, प्रचलित, प्राचीन एवं सुलभ है कि इसके द्वारा मिट्‌टी के पात्र तथा खिलौनों का निर्माण सरलता से किया जाता है तथा इसको आसानी से प्राप्त भी किया जाता है। यह अपने संरचनात्मक गुण के कारण गीली अवस्था में मुलायम व लचीली होती है और सूखने के पश्चात् कठोर हो जाती है तथा पकने के बाद अति कठोर हो जाती है। इसके इस गुण के कारण यह प्राचीन काल से कलाभिव्यक्ति, सांस्कृतिक धरोहरों एवं उपयोगी वस्तुओं के बनाने का प्रमुख साधन रही है। भारतीय समाज के एक वर्ग ^dqEgkj* का जीवकोपार्जन तो इसी के द्वारा होता है। मिट्‌टी से बनी वस्तुओं का शिल्पकलाओं में विशेष स्थान है। मिट्‌टी सम्पूर्ण भारत में सरलता से उपलब्ध है, इसलिए इसके द्वारा खिलौने सम्पूर्ण भारत में ग्राम्यजन एवं आदिवासी जन के मध्य में समान रूप से लोकप्रिय हैं।

मिट्टी के खिलौनों के क्रम में भारत में, इन्हें बनाये जाने की परम्परा प्राचीन है, यहाँ इनकी शैली में विशिष्टता स्वाभाविक रूप से दर्शित है। यहाँ पर खिलौने सरल–सहज रूपाकारों के बनाये जाते हैं। यहाँ पर इनको धार्मिक तथा सामाजिक मान्यता प्राप्त है। यह एकल एवं 'सेट' यानि समूह रूप में बनाये जाते हैं। जिनके विषय विभिन्न सामाजिक, धार्मिक होते हैं। यह कृष्ण–जन्माष्टमी में झाँकी स्वरूप सजाये जाते हैं, दीपावली में घरौंदा तथा पूजन स्थल में रखे जाते हैं, हरछट पूजन में 'हरछठ माई' के समक्ष/प्रत्यक्ष सजाये जाते हैं तथा शादी के समय दुल्हन के साथ जाने वाली 'सास की पिटारी' में इन्हें रख कर ससुराल भेजा जाता है। यहाँ खिलौने जन–जन में प्रिय हैं। यहाँ यह भी अवगत कराना है कि मिट्टी के खिलौनों के विषय में जो लिखा गया है, उसका तात्पर्य आकृति प्रधान खिलौनों से है।

8 सेमी. हाथी 2012

❑❑❑

2

लोक कला और खिलौना

मिट्टी के खिलौने लोककला का आत्मस्वरूप अथवा अंश हैं इसलिए खिलौनों के अर्थ एवं परिभाषा को समझने के लिए लोककला के विषय एवं महत्व को समझना अति आवश्यक हो जाता है।

लोक कला को समझने के लिए सर्वप्रथम 'लोक' शब्द के अर्थ को जानना आवश्यक है। 'लोक' का अर्थ व्यापक होता है परन्तु सामान्यतः 'लोक' शब्द का तात्पर्य 'जन', 'स्थान','जीवन', 'जगत्', 'सर्वलोक', 'जनसाधारण', 'प्रजातंत्र','समाज' एवं 'आम नागरिक' होता है। लोक कला अर्थात जन–जन या सर्वसाधारण अथवा ग्रामीण परिदृश्य में रहने वाले सरल, स्वभाव के व्यक्ति द्वारा रचा गया अथवा बनाया गया कार्य है। अर्थात् लोककला अभिव्यक्ति जिसमें मानवीय भावनाओं का सर्वोच्च महत्व हो, यद्यपि जनसाधारण में प्रचलित रीतियाँ इस परिधि में आती हैं।

लोक कला की उत्पत्ति और उसकी सृजनात्मक स्थिति दोनों ही समाज को प्रेरित करती है। यह समाज को एक–सूत्र में बाँधने की एक अमूल्य धरोहर के रूप में प्रस्तुत होती है। इसको जानने एवं समझने के विविध पक्ष होते हैं, इस कला के कोई सैद्धान्तिक नियम न होने के कारण जो व्यक्ति जिस भाव से देखता है, उसी भावना से वह उसे ग्रहण करता है और इसके विभिन्न रूपों को पहचान लेता है क्योंकि इसमें आंतरिक भावों की मनः स्थिति छिपी होती है।

लोक कला में जन–कल्याण की भावना व्याप्त है, यह राष्ट्र एवं लोक समाज की साधना का प्रतीक है। यह सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक विरासत का आत्ममंथन है, यह समाज के लिए अत्यन्त उपयोगी है तथा इसके अन्तर्गत मनोरंजन, आस्था, विश्वास के साथ–साथ समाज में व्याप्त कुरितियों का समाधान प्रस्तुत होता है। लोककला सामाजिक विषयों पर आधारित है इसलिये यह समाज के अभ्युदय में सहायक है। इसकी सात्विक कल्पनाएँ सदैव समाज को मानवता के लिए प्रेरित करती हैं, यह नैतिक दृष्टि से भी प्रेरणा स्वरूप है। लोक कलाओं के विविध प्रकार –

चित्र, मूर्ति, भवन, काव्य, संगीत, खिलौने, साहित्य, नृत्य, नाट्य एवं विभिन्न वस्तुओं आदि में समाज का सार्वभौमिक हित पूर्णरूप से छिपा होता है। यह मानव के व्यावहारिक पक्ष को व्यक्त करती है। इसमें धार्मिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक चेतना का समावेश होता है।

भारतीय लोक कला में रसों की निष्पति का भरपूर प्रयोग हुआ है जिस कारण मानव मन प्रफुल्लित हो उठता है, तन्मयता से लोक कलाओं का आनंद लेने से सहृदयता का भाव रसास्वादन में लीन हो जाता है। लोककला के सर्वतोमुखी विकास में मनुष्य के चेतन अवस्था एवं क्रियात्मक अभिव्यक्ति का योगदान महत्वपूर्ण है।

लोक कला एक भाषा है जिसमें मन के आन्तरिक भावों की उत्पत्ति होती है। इस मूक भाषा का कार्य समाज एवं व्यक्ति के मध्य सेतु का कार्य करना है, जिससे व्यक्ति और समाज एक दूसरे के परस्पर करीब रहे। इस भाषा का कोई रूप निर्धारित नहीं बल्कि मनःस्थिति के अनुसार यह प्रेम, सौहार्द, करुणा व मानवता के हित में अपने को प्रकट करती है। इस भाषा के नये–नये रूप सांस्कृतिक विविधता के साथ सामने आते रहते हैं जिसमें लोक का कल्याण निहित होता है।

भारत में लोक परम्पराओं को जीवन का लक्ष्य समझा जाता है। यह हमारे व्यक्तित्व पर गहरा असर डालती है। कहा जाता है कि किसी क्षेत्र की लोक कलाएँ वहाँ के निवासियों के व्यक्तित्व का दर्पण होती है तथा व्यक्तित्व के विकास में इनका योगदान महत्वपूर्ण होता है।

लोककला भारतीय परम्पराओं की धरोहर है जिसमें तीज–त्योहार, रीति–रिवाज, धार्मिक मान्यता, लोक संस्कार एवं सामाजिक चेतना को कला के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। यह कभी अलंकरण के रूप में, तो कभी धर्म के रूप में, कभी वेशभूषा एवं वस्तुओं के रूप में, तो कभी संस्कार एवं रीतियों के रूप में, तो कभी खिलौना आदि के रूप में नितांत मौलिक एवं स्वतन्त्र है। इस कला में न कोई सिद्धान्त का बन्धन, न शासकीय आरोपण और न ही इसमें यर्थाथता की बेड़ियाँ बँधी होती है। यह तो बस पुरखों की बेशकीमती अमानत है, जिस पर गौरवान्वित हुए बिना नहीं रहा जा सकता है। इस लोक परम्परा का एक सामाजिक एवं ऐतिहासिक महत्व है।

भारत वैभिन्य प्रधान देश है जिसमें विभिन्न संस्कृतियों के लोग लोक–जीवन में वास करते हैं। इसलिए यहाँ यह स्वाभाविक है कि इन लोगों का रहन–सहन,

खान–पान, बोली, वेशभूषा, रीति–रिवाज, मान्यताएँ, परम्पराएँ एवं रुचियाँ भिन्न–भिन्न होती है इस भिन्नता के कारण प्रत्येक क्षेत्र, समुदाय, जाति की पहचान के अलग–अलग रूप में विकसित है और इसी आधार पर लोक कलाओं के विभिन्न स्वरूप प्रत्यक्ष दिखायी देते हैं। प्रायः देखा गया है कि लोक कलाएँ सामाजिक समरसता, भक्ति–भावना एवं संस्कारों से ओत–प्रोत है। भारत में पूजा के दो स्वरूप विकसित है, एक साकार जिसे मूर्ति पूजा कहा जाता है और दूसरा निराकार जिसमें परब्रह्म की उपासना की जाती है। लोककला की मान्यताओं में इन्हीं के आधार पर अपने आराध्य की पूजा प्रत्यक्ष एवं प्रतीक रूप में की जाती है। लोकजन घर की भित्तियों एवं भूमि पर प्रतीक चिन्हों के माध्यम से अनगढ़त हाथों से चित्र बनाकर तथा पूज्यनीय मूर्तियों का निर्माण कर पूजन–अर्चना करते हैं। इस प्रकार से इन लोक रूपों ने लोक कला के अनेक रूप धारण किये तथा शनैः–शनैः सभ्यता की प्रगति के साथ–साथ लोक कलाओं का भी विकास होता गया है। त्योहारों, रीति–रिवाज एवं मान्यतानुसार घरों में मंगल चिह्न एवं अलंकरण का विधान है जो प्राचीन संस्कृति–सभ्यता से प्राप्त हुए है और निरन्तर बनते चले आ रहे हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोककलाएं अतुलनीय है और लोक शिल्पकार सम्माननीय है। इस कला में सामाजिक समरसता का भाव निहित है। सौन्दर्य एवं कलात्मकता इसके अन्तर्गत समाहित है। इस कला में आकृतियाँ अथवा रूप टेढ़ी–मेढ़ी रेखाओं द्वारा निर्मित हो या आकार बेडोल सृजित हो, इनका सरल व सहजपन मन को सदैव आकर्षित करता है। इस कला का महत्व आदिकाल से वर्तमान तक विकास पथ पर अकृतिमता का भाव लिए आगे बढ़ते हुए तत्पर दिखाई देता है। जनकल्याण की भावना से ओत–प्रोत इस कला का मुख्य कार्य मानव को मानसिक रूप से दृढ़ता व आत्म विश्वास प्रदान करना है। लोककला भारतीय समाज में आर्थिक एवं सामाजिक रूप से अपना योगदान देकर भारतीय संस्कृति की रक्षा कर, महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रही है। इसी भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग भारतीय खिलौने हैं जिनमें सर्वाधिक महत्त्व मिट्टी के खिलौनों का रहता है। इन खिलौनों का भारतीय समाज और भारतीय लोककला में भी अति महत्वपूर्ण स्थान है। यथा इन लोक कलाओं के रूप में खिलौनों का बनाना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है अतः इस खिलौना कला पर विस्तृत प्रकाश डालना अति आवश्यक तथ्य है।

3
कुम्हार (शिल्पकार)

कुम्हार वह शिल्पकार है जो मिट्टी से रचनाएँ करता है और मानव कल्याण के लिए सदैव समर्पित रहता है। इन्हें 'कुम्भकार' भी कहा जाता है अर्थात 'कुम्भ' की रचना करने वाला, 'कुम्भ' मिट्टी के जल भरने के पात्र को कहते हैं। इन्हें **'प्रजापति'** की उपाधि प्राप्त है। प्रजापति अर्थात सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी। कहा जाता है कि ब्रह्मा जी ने सर्वप्रथम मिट्टी से मानवाकृति बनायी और उसमें जीवन का संचार किया, इसीलिए वह प्रजापति कहलाए। चूंकि कुम्हार भी मिट्टी से रचना करता है इसलिए इन्हें 'प्रजापति' कहा गया। कुम्हार मिट्टी के रूप को परिवर्तित कर, रचना करता हैं, वह मिट्टी को पैर से कुचलता है और कुचली गयी मिटटी से प्रतिस्थापन कर, कुम्भ से लेकर खिलौनों तक की रचना करता है। वह धार्मिक, लौकिक, खेल, उपयोगी एवं विश्वास पर आधारित कृतियाँ बनाता है। प्राचीन साहित्य में कुम्हार को **'लेप्यकार'** एवं **'पुस्तकृत'** भी कहा गया है।

देवशिल्पी **'विश्वकर्मा'** के उत्तराधिकारी के रूप कुम्भकार (कुम्हार) का स्थान सर्वोच्च था। यह समाज में रहकर, समाज के लिए गृहोपयोगी तथा सजावटी वस्तुओं का निर्माण प्राचीन काल से अद्यतन करता चला आ रहा है। समाज की सांस्कृतिक रस्म–रिवाज में कुम्हार का विशेष महत्व रहता है। विवाह रस्म में कुम्हार के 'चाक' को पूजने का विधान है, समझा जाता है कि चाक ब्रह्माण्ड की गति का द्योतक है और सृजनकर्ता है क्योंकि इसमें विभिन्न आवश्यक रचनाएँ होती है। यह मानव जीवन के लिए न जाने कितनी उपयोगी वस्तुओं का निर्माण करता है, जिससे सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इसलिए इसे पूजने से जीवन चक्र में समृद्धि तथा वंश वृद्धि की कामना निहित रहती है।

सामाजिक समरसता में कुम्हार का योगदान पूर्णरूपेण होता है। वह पर्यावरण के अनुकूल वस्तुओं को सृजित करता है। धार्मिक पूजन–विधान की मूर्तियाँ, चढ़ावा चढ़ाने हेतु आकृतियाँ, रस्म–रिवाज की सामग्री बनाना, इनके जीवन

का मूल हिस्सा है। जल भरने के मटके एवं अनाज संग्रहीत करने के पात्र से लेकर बच्चों के खेलने के खिलौने बनाकर, यह अपनी सामाजिक उपादेयता को प्रदर्शित करता है। घर व जीवन के लिए आवश्यक पेड़–पौधे लगाने के लिए गमले तथा घर की छत को छाने के लिए छप्पर और न जाने कितनी जीवनोपयोगी वस्तुएँ बनाकर वह अपनी सार्थकता को प्रस्तुत करता है। इस प्रकार वह वंश–परम्परा द्वारा कलात्मक कुशलता एवं अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर, समाज को अपने योगदान से फलीभूत कर अपनी उपस्थिति का स्मरण कराता रहता है।

भारतीय जीवन–दर्शन के विभिन्न अभिप्राय से जुड़ी मिट्टी की कला को गढ़ने वाले कुम्हार आर्थिक–सामाजिक संघर्ष के पश्चात् भी इसकी दक्षता को संजोए हुए है। भारतीय जनमानस भी इस विरासत को सुरक्षित रखने में अपनी महती भूमिका का निर्वहन कर रहा है। इन दोनों अर्थात कुम्हार की दक्षता व संघर्ष तथा भारतीय जनमानस का मिट्टी के पात्र व खिलौना प्रेम के, समन्वय के अटूट क्रम से, वर्तमान में यह कला अपना अस्तित्व बनाये हुए है। यह बात भारतीय लोकपरम्परा के लिए गर्व का विषय है। सम्पूर्ण भारत में कश्मीर से कन्याकुमारी तक कुम्हारों की स्थिति, परिस्थिति एक समान है तथा कार्य प्रणाली, प्रक्रिया–विधान एवं सामाजिक स्थिति एक जैसी है। यह लोग विपरीत परिस्थिति होने के पश्चात् भी सृजन कार्य निरंतर करते चले आ रहे हैं।

❑❑❑

4
खिलौनों का इतिहास

सम्पूर्ण विश्व में मिट्‌टी के खिलौने एवं पात्र प्राचीन काल अर्थात नव प्रस्तर युग से बनाये जा रहे हैं। यह सर्वदेशीय है इनके प्राचीन ध्वंसावशेष ईराक की मेसोपोटामियां सभ्यता, मिस्र की नील नदी घाटी सभ्यता, भारत में सिन्धु घाटी सभ्यता, चीन, ईरान, सीरिया, क्रीट एवं साइप्रस आदि से प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए है। इस क्रम में भारत में भी मिट्‌टी की वस्तुओं का प्रचलन रहा है और यहाँ कि लोक–संस्कृति का अभिन्न अंग रही है।

भारत में प्राचीनकाल से अद्यतन लोक–संस्कृति का विविध क्षेत्रों में विकास हुआ है। यहाँ की लोक–संस्कृति सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं पर आधारित रही है। इसका महत्व यहाँ के समाज में सर्वोपरि है तथा इसके प्रभावों को भारतीय लोकाचारों अर्थात रीति–रिवाज, संस्कार, त्योहार एवं उत्सव आदि में अब भी देखा जा सकता है। यहाँ पर लोकाचारों को जीवन का अप्रतिम लक्ष्य समझा जाता है। इन लोकाचारों के विभिन्न आयामों में से सबसे जन–प्रचलित शाखा के रूप में 'लोक कलाएँ' हैं।

'लोक कलाएँ' मानव–संस्कृति की समष्टि संचेतना के संवाहक के रूप में सम्पूर्ण भारत में प्रचलित है। लोक–कलाओं के विभिन्न रूप होते हैं जिनमें सबसे अधिक उपयोगी एवं आवश्यक रूप मिट्‌टी से बनी कलात्मक वस्तुएँ तथा खिलौने होते हैं। इनमें खिलौने सबसे अधिक लोक प्रचलित हैं।

भारतीय सांस्कृतिक–जीवन में खिलौनों का स्वरूप अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इनकी उपयोगिता एवं आकर्षण में कोई कमी नही आयी है। इनकी विशेषता, कलात्मकता एवं लोकाचार प्रत्येक व्यक्ति के मन को आकर्षित करते हैं क्योंकि इनके रूप सरल व सहज होते हैं।

प्राचीन समय में खिलौने हस्तनिर्मित होते थे अर्थात् **'डौलिया'** पद्धति से

बनाये जाते थे तत्पश्चात् यह साँचे तथा चाक से बनाये जाने लगे। प्रारम्भिक समय में इनकी रचना 'एकल' रूप में की जाती थी। शनैः–शनैः यह 'सामूहिक' रूप यानि 'सेट' में बनाये जाने लगे। प्राचीन सन्दर्भो से ज्ञात होता है कि यह उस समय खेलने व सजाने के कार्य में प्रयुक्त किये जाते थे, समय के साथ–साथ यह पूजन–पाठ, रीति–रिवाज, त्योहार एवं सामाजिक सरोकारों से जुड़ते गये और क्षेत्र विशेष का प्रभाव इनमें समाविष्ट होता गया।

मिट्टी से सर्वप्रथम सृजन कैसे प्रारम्भ हुआ, इस सन्दर्भ में एक प्रचलित पौराणिक कथा है कि देवलोक में यज्ञ होना था, जिसमें जल रखने के लिए एक पात्र की आवश्यकता हुई। सभी देवताओं ने मिलकर अपनी शक्ति से **'कुम्हार'** को उत्पन्न किया। भगवान विष्णु ने उसे अपना **'सुदर्शन चक्र'** दिया जो **'चाक'** बना, भगवान शंकर ने मिट्टी की **'पिन्डी'** दी जिससे सृजन प्रारम्भ हुआ तथा भगवान ब्रह्मा जी ने अपना **'जनेऊ'** दिया जिससे सृजित वस्तुओं को चाक से अलग कर उन्हें स्वतन्त्र अस्तित्व प्रदान किया गया। इस प्रकार से जल संचय हेतु सर्वप्रथम मिट्टी के पात्र की रचना हुई और देवलोक में यज्ञ सम्पन्न हुआ । इस पात्र को **'कुम्भ'** कहा गया। अतः मृदा शिल्पों का आरम्भ कुम्भ से ही माना गया है।

इसी सन्दर्भ में अर्थात प्रथम 'कुम्भ' की रचना कैसे हुई या इसकी रचना का विचार मानव मस्तिष्क में सर्वप्रथम कैसे आया, के सम्बन्ध में 'कुम्हार पारा' कोंडा गाँव, बस्तर के आदिवासियों के मध्य एक मिथक कथा प्रचलित है –

'**किसी जंगल में हाथी रहते थे। हाथियों का समूह तालाब में जल–क्रीड़ा कर रहा था। हाथी को जल और कीचड़ अधिक पसंद होने के कारण वे उसे सूंड में भरकर सिर पर उछालने लगे। एक हाथी के सिर पर पैरों से मथे हुए कीचड़ की मोटी तह चिपक गई। जलक्रीड़ा के बाद हाथी बाहर निकल आये और धीरे–धीरे हाथी के मस्तक पर लगा कीचड़ सूख गया। किसी समय वह पूरी की पूरी कीचड़ की खपरानुमा पपड़ी हाथी के सिर से खिसक कर नीचे ज़मीन पर गिर पड़ी। आदिम मानव ने रास्ते में हाथी के मस्तक से गिरते हुए यह विचित्र वस्तु देखी तो वह उसे उठाकर झोपड़ी में ले आया। झोपड़ी घासफूस की थी। संयोगवश झोपड़ी में आग लग गई और वह खपरा आग में पक कर लाल हो गया। आदिमानव को आश्चर्य हुआ। बरसात हुई तो उसमें पानी भर गया। तब भी वह गली नहीं ज्यों की त्यों रही। तब मानव को और अधिक आश्चर्य हुआ। हाथी के**

मस्तक को कुंभ भी कहते हैं, इसलिए आदिमानव ने उस पात्र का नाम कुंभ रख दिया।''[1]

इस प्रकार प्रथम मृण्मूर्ति रचना के सन्दर्भ में भी एक रोचक कथा इन्हीं आदिवासियों के मध्य प्रचलित है कि उक्त हाथी द्वारा दिया गया प्राकृतिक पात्र अर्थात कुम्भ जिसने जल संचय का विचार दिया, को अनमोल धरोहर मानकर, उनके मध्य हाथियों को देवतुल्य पूजने का विधान प्रारम्भ हो गया। आदिवासियों ने –

''हाथी के इस उपकार को महत्वपूर्ण माना और वह उसकी पूजा करने लगा। धीरे–धीरे हाथी पूजा का सभी ओर प्रचलन हो गया लेकिन सब ओर जीवित हाथी मिलना मुश्किल होने लगा अतः आदिमानव ने मिट्‌टी का अनघड़ हाथी बनाकर पूजा करना प्रारम्भ कर दिया। यही प्रथम कुम्भ और हाथी की मृण्मूर्ति बनने की शुरूआत है। सम्भवतः मिट्टी मूर्ति से कला की निष्पत्ति का प्रथम पवित्र सूत्रपात भी वहीं से हुआ।''[2]

खिलौनों और मृण्मूर्तियों के अनेक सन्दर्भ भारतीय पौराणिक एवं धार्मिक ग्रन्थों से प्राप्त होते हैं।

''महाभारत और उत्तरकालीन साहित्य में मृण्मय मूर्तियों के उल्लेख पाये जाते हैं। द्रोण के शिष्य एकलव्य ने अपने गुरु की मिट्टी की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा की। मद्र देश का राजकुमार अश्वपति बचपन में मिट्टी के घोड़े बनाकर उनसे खेलता था। भद्‌दसाल जातक में लिखा है कि राजकुमार को ननिहाल की ओर से हाथी–घोड़े और अन्य खिलौने खेलने के लिए दिये जाते थे। मृच्छकटिक नाटक का नाम मिट्टी की गाड़ी के आधार पर रखा गया है जिससे चारुदत्त का लड़का रोहसेन खेला करता था। नागार्जुनकांड के शिलापट्ट पर पहियेदार छोटी गाड़ी का चित्र है जिसे एक बच्चा धागे से बाँधकर खींच रहा है। मार्कण्डेय पुराण में दुर्गा की महिमा मयी या मिट्टी की मूर्ति का उल्लेख है जैसी अभी तक नवरात्र के समय बनाई जाती है। कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तल में एक चित्रित मयूर या मिट्टी के रंगीन मोर का उल्लेख किया है जो बालक भरत के मन बहलाने का खिलौना था।''[3]

---

1. बसंत निरगुणे, मिट्‌टी शिल्प (1993), मध्य प्रदेश आदिवासी लोककला परिषद,भोपाल पृ. 8
2. बसंत निरगुणे, मिट्‌टी शिल्प(1993), मध्य प्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल,पृ. 8
3. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी 321

प्रस्तर युगीन सभ्यता काल से खिलौनों का प्रचार है। विद्वानों के अनुसार ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि प्रारम्भिक समय में जब कृषक समुदाय का उदय हुआ था तब कच्ची मिट्टी से ही रचनाएं प्रारम्भ की गयी थी क्योंकि नवपाषाण युग का प्राथमिक कृषक समुदाय चित्रित मृदभाण्डों का प्रयोग करता था। ई.पू. 7000 वर्ष की आरंभिक/प्राचीन मिट्टी से निर्मित मूर्तियां बलुचिस्तान के मेहरगढ़ से बिना पकी हुई प्राप्त हुई है जो अत्यन्त साधारण है।

"मेहरगढ़ के प्रथम उपकाल से तीन स्त्री और दो पशु मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। इन्हें पकाया नहीं गया है। शैली की दृष्टि से भी ये साधारण कोटि की है। मेहरगढ़ के उदाहरण में मृदभाण्ड विहीन निचले स्तर से इन मृण्मूर्तियों की प्राप्ति से अनुमानित है कि संभवतः मृद्भाण्डों के पूर्व से मृण्मूर्तियों का निर्माण प्रचलित था।"[4]

इसके पश्चात् मेहरगढ़ से ही पकी हुई मृण्मूर्तियों के अवशेष प्राप्त हुए है जिन पर चिपकवा विधि से अलंकरण है। ये स्त्री तथा पशुओं की मृण्मूर्तियाँ है।

"द्वितीय उपकाल से चतुर्थ उपकाल (लगभग ईसवीं पूर्व 6000– 4000) के मध्य भी अनेक मृण्मूर्तियां मेहरगढ़ में बनी। इस दौरान बनी मृण्मूर्तियां पकी हुई है। किंतु शैली की दृष्टि से उनमें कोई विशेष अंतर दृष्टिगत नहीं होता। पूर्व के समान स्त्री मृण्मूर्तियों के सिर चिपटे हैं। इन पर चिपकवा विधि से सामान्य अलंकरण भी किए गए है। ऐसी ही पशु मृण्मूर्तियां भी बनी है।"[5]

यहाँ से प्राप्त मृण्मूर्तियाँ हाथ से ही बनी हुई है तथा खिलौने रूप में हैं। कांस्ययुग में **सिंधु घाटी सभ्यता (2750ई.पू.–1750ई.पू.)** का उदय हुआ, जिसमें मोहनजोदड़ो, हड़प्पा एवं लोथल सभ्यताएं विकसित हुई थीं। इन पुरास्थलों से मृद्माण्ड, मृण्मूर्ति तथा मिट्टी की मुहरे आदि उत्खननों से प्राप्त हुई हैं। नव पाषाणिक मृण्मूर्ति परम्परा इस युग में भी निरंतर विद्यमान रही। इस समय के कुम्हार निपुण थे। वे बिना साँचे अर्थात हाथ से खिलौने व मृण्मूर्तियाँ बनाने में दक्ष थे। इन्हें बनाने के लिए वह **'कांचली' मिटटी** का प्रयोग करते थे।

---

4. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 3
5. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 3

"सिंधु सभ्यता के उदय से पूर्व अफगानिस्तान, बलूचिस्तान एवं सिंध क्षेत्र में अनेक ग्रामीण संस्कृतियां पनपीं। इन संस्कृतियों के मृद्‌भाण्डों पर अंकित या चित्रित आकृतियां एवं मृण्मूर्तियां मुख्य रूप से कला को उद्‌घाटित करती हैं। उक्त दोनों ही प्रकार की कला कृतियों का निर्माण पूर्व काल से भी प्रचलित था लेकिन इस युग की कला के अवशेष शैली और निर्माण के परिष्कार की दृष्टि से विशिष्ट प्रकार के हैं।"[6]

इस काल के मृदा शिल्पों में रंगों का प्रयोग होने लगा था। मृदभाण्डों के साथ–साथ मृण्मूर्तियों को भी रंगों द्वारा सजाया गया।

"रंगो के प्रयोग से कलाकारों की सिद्धहस्तता का बोध होता है। एकाधिक रंगों के प्रयोग से आकृतियों में उभार लाने में उन्होंने दक्षता का परिचय दिया। यही मृण्मूर्तियों पर भी चित्रण करके उसे सजाने में इस युग के कलाकार पीछे नहीं रहे।"[7]

इस समय की मृण्मूर्तियों का रूप काफी विकसित था। कलात्मक दृष्टि से यह उल्लेखनीय थी। नारी की आकृतियों में सजावट के रूप में आभूषण का प्रयोग विशेष था।

"नवपाषाणिक मेहरगढ़ में बनी मृण्मूर्ति की परंपरा इस युग में भी विद्यमान रही। पूर्व हड़प्पा संस्कृति के अनेक केंद्रों से मानव एवं पशु मृण्मूर्तियां प्रकाश में आयी हैं। इनका अध्ययन जहाँ एक ओर यह दर्शाता है कि वह किस प्रकार पूर्वकालिक मृण्मूर्तियों से विकसित रूप में बनी है वहीं हड़प्पीय मृण्मूर्तियों के निर्माण में उनकी भूमिका भी प्रकट होती है। इस दृष्टि से मेहरगढ़ की मृण्मूर्तियों का योगदान महत्वपूर्ण है। यहाँ की नवपाषाणिक आकृतियों के निर्माण में आदिम रूप का दर्शन होता है।"[8]

स्त्री रूपों के अतिरिक्त पशु आकृतियों का सृजन अधिक मात्रा में हुआ, विशेष रूप से 'वृषभ' की मृण्मूर्तियाँ बहुतायत में बनी। विद्वानों का मानना है कि

---

6. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 4
7. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 4
8. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 8

'वृषभ' को अनुष्ठान आदि में प्रयोग के लिए बनाया जाता होगा। इसके अतिरिक्त यहाँ के उत्खनन से खिलौने भी प्राप्त हुए हैं।

"पशु मृण्मूर्तियों में अधिकता है वृषभ आकृतियों की। कुल्ली के कलाकारों द्वारा बहुत अधिक संख्या में इनका निर्माण किया गया था। मेही, कुल्ली और शाहीटम्प के उत्खनन में प्राप्त वृषभ मृण्मूर्तियाँ कला शैली की दृष्टि से कुल्ली मृदभाण्डों पर चित्रित वृषभ की आकृति से समानता लिये हुए है। मृण्मूर्तियों में पैर दंड के समान है और ककुद विशाल है। उन्हें काले रंग से बनी छोटी–बड़ी सीधी एवं लहरिया रेखाओं से सजाया गया है। नारी आकृतियों की तुलना में पशु मृण्मूर्तियों के निर्माण में कलाकार अपेक्षाकृत अधिक सिद्धहस्त जान पड़ता है। सीमित क्षेत्र से अधिक संख्या में चित्रित वृषभ मृण्मूर्तियों के मिलने से अनुमानित है कि इनका निर्माण विशिष्ट प्रयोजन से किया जाता रहा होगा। इस संदर्भ में यह संभावना व्यक्त की जाती है कि निर्धारित धार्मिक कृत्य में देवताओं को चढ़ाने के लिए इनका उपयोग या तो किया जाता रहा होगा या इनकी स्वयं पूजा होती रही होगी। धार्मिक प्रयोजन से निर्मित पशु मृण्मूर्तियों के अतिरिक्त कुछ पशु आकृतियाँ खिलौने के रूप में भी रही होंगी, विशेषतः वे जिनके पैरों में छिद्र है। ऐसा प्रतीत होता है कि छिद्रयुक्त पैर वाले वृषभों में कुछ खिलौना गाड़ी में जोतने हेतु निर्मित किए गए रहे होंगे। कुल्ली की तुलना में झोब से कम वृषभ मूर्तियाँ मिली हैं और वे पूर्णतः सादी हैं। निर्माण शैली की दृष्टि से झोब की वृषभ मूर्तियाँ स्वाभाविकता के अधिक समीप हैं। कोटदीजी से ज्ञात ककुद सिंधु सभ्यता, बैलवृषभ की आकृति अत्यंत सुन्दर बन पड़ी है। झोब संस्कृति में घोड़े की मृण्मूर्ति भी बनी थी।"[9]

"सिंधु सभ्यता के विभिन्न नगरों से पर्याप्त संख्या में मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। इनमें मानव तथा पशु आकृतियाँ तथा बच्चों के खिलौने सम्मिलित हैं। पूर्व की तथा बाद की ग्रामीण संस्कृतियों की तुलना में नगरी सभ्यता में अधिक संख्या और विविधता में मृण्मूर्तियों की प्राप्ति व्यक्त करता है। सुसंपन्न नगरीय सभ्यता में इनकी अधिक मांग रही होगी। कलाकार मानव, पशु और खिलौने की स्वभावगत आकृतियाँ बनाने में निपुण थे। उन्होंने जहाँ जनसामान्य के लिए साधारण मृण्मूर्तियां बनाई वहीं

9. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 6

विशिष्ट जन और धार्मिक प्रयोजन के लिए आभूषणों से सजी–धजी तथा रंगों से चित्रित विशिष्ट आकृतियां भी बनाईं।''[10]

सिंधु सभ्यता, बैल

इस सभ्यता में आभूषणों से सुसज्जित मातृदेवी जिन्हें महीमाता भी कहा गया है, की मृण्मूर्तियाँ अधिकता से बनायी गयी। इन मूर्तियों को देखकर प्रतीत होता है कि इनका धार्मिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान था। इसके अतिरिक्त नारी के अनेक रूप जिसमें मातृत्व व गृहणी की मृण्मूर्तियाँ है, वह भी प्राप्त हुईं हैं।

''सिंधु सभ्यता की मानव मृण्मूर्तियों में नारी आकृतियों की अधिकता है। इनमें कुछ तो मातृदेवी के रूप में भी स्वीकृत हैं। अन्य घरेलू जीवन से संबंधित हैं। उन्हें वस्त्र–आभूषणों से सुसज्जित बनाया गया है। वस्त्र–आभूषणों में उल्लेखनीय है घाघरा सदृश अधोवस्त्र, दोनों ओर प्यालेनुमा आकृति युक्त पंखाकार शिरोभूषा, हंसली, मनके सहित लड़ियों वाले लंबे हार, भुजबंद, कड़े, कर्धनी आदि। वासुदेव शरण अग्रवाल ने पंखे सदृश आभूषण को ऋग्वेद में वर्णित 'ओपश' माना है। कुछ उदाहरणों में सिर पर पगड़ी के समान शिरोभूषा है। कुछ नारी आकृतियों के उदर और वक्ष पर उभार दिखलाया गया है। इसके साथ कमर पर बच्चे को लिए,

10.अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 10

दुग्धपान कराती, उभरी उदरवाली, तख्ते पर लेटी हुई नारी आकृति जैसी मृण्मूर्तियों को मातृदेवी के रूप में मान्यता प्राप्त है। घरेलू जीवन से संबंधित मृण्मूर्तियों में नारी को आटा गूँथते, तीन पाए वाली कुर्सी पर बैठे आदि रूपों में दिखलाया गया है।''[11]

इस समय खिलौना एवं मिट्‌टी के अन्य उपयोगी सामान बनाने की कला

सिंधु सभ्यता, बैलगाड़ी (दैमाबाद)

अत्यन्त विकसित थी। यह आवश्यकता के अनुरूप गढ़े जाते थे। इस प्रकार सिंधु सभ्यता से उत्कृष्ट किस्म के खिलौने, मृण्मूर्ति, मुखौटे, ताबीज, आभूषण, बटन, मृद्‌भाण्ड एवं मोहरें आदि पकी मिट्‌टी के प्राप्त हुए हैं। इन मृण्मूर्तियों एवं खिलौने में विशेष रूप खिलौना गाड़ी चलाने वाला बन्दर, सिर हिलाने वाली मानवाकृतियाँ, सीटी वाली चिड़िया, चौसर के पासे, घुटने केबल चलते हुए बच्चे, हाथ में बच्चा लिये हुए स्त्री, मातृदेवी, दुग्धपान कराती स्त्री एवं आटा गूँथते हुए स्त्री एवं नन्हें बर्तन आदि के अतिरिक्त पशु–पक्षियों में भेड़, वृषभ, बन्दर, भैंस, व्याघ्र, हाथी, गैंडा, खरगोश, गिलहरी, बकरा, सुअर, गोरिल्ला, कछुआ, मछली, घड़ियाल, सांप आदि प्राप्त हुए है जो यह सिद्ध करते हैं कि उस समय खिलौनों का प्रचलन बहुतायत में था और वह लोक जीवन में प्रचलित थे।

11. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 6

महाजनपद युग (लगभग ई.पू. 1500 से 500 ई.पू.) – इस समय आर्य सभ्यता का विकास हुआ। शिल्पियों में कुम्हार को सम्मान प्राप्त था। राजा कुम्हारों से ईंट बनवाने का कार्य करते थे। इस समय मिट्टी के भांडे–बर्तन बनाने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। मिट्टी के खिलौने बनाये तो जाते थे परन्तु खिलौनों के कोई अवशेष नहीं प्राप्त हुए, लेकिन राजप्रसाद के शयनकक्ष में पलंग के पास यथार्थ शैली की जीवन्त मिट्टी की ढाली गई स्त्रियों की मूर्तियां सजाने के प्रमाण मिलते हैं।

"पश्चिमी भारत के विहारों में जो भिक्षुओं के लिए अपवरक या कोठरियाँ बनी हैं, उन्हें भी गर्भ कहा गया है और उनके मण्डपों का द्विगर्भ, पंचगर्भ या दशगर्भ कहा है। प्रत्येक गर्भ में एक महाशयन या पलंग बिछाया गया था। उस पलंग के ऊपर श्वेत छत्र लगाया गया और इसी के पास बैठने का आसन रखा गया। हरेक पलंग के पास मिट्टी और गच की ढाली हुई एक स्त्री मूर्ति या पुतली खड़ी की गई (मातु–गाम पोत्थक रूपक)। वे अत्यन्त सुन्दर थीं (उत्तम रूपधरा), वे बिल्कुल ऐसी जीती–जागती जान पड़ती थीं कि बिना छुए यह नहीं ज्ञात होता था कि सचमुच की हैं या कृत्रिम (हत्थेन अनमसित्वा न मनुस्स–रूपकं ति न सक्का ञातुम्)। ये पुतलियाँ हाथों में धूप–दीप आदि लिए हुए थीं। बाद के शयन गृहों में इसी रूप मे उनका वर्णन आता है। तब उन्हें अज्जलिकारिका संज्ञा दी गई, जैसे बाण के हर्ष चरित में।"[12]

वात्स्यायन के 'कामसूत्र' में जिन 64 कलाओं का उल्लेख है। उसमें 61वे क्रम में **'बालक्रीडनक कला'** अर्थात बच्चों के खिलौने बनाने की कला उल्लेख आया है।

'कामसूत्र' ग्रन्थ की रचना का समय लगभग ई.पू. पाँचवी शताब्दी से ई.पू. तीसरी शताब्दी के मध्य माना जाता है। कामसूत्र ग्रन्थ के 'बालोपक्रमण प्रकरणम्' (तृतीयोऽध्यायः) में आचार्य वात्स्यायन ने कहा है कि नायिका को अपनी ओर आकृष्ट करने हेतु नायक उसे **"जिस–जिस वस्तु में कुतूहल हो, उत्सुकता हो, उन्हें लाकर नायिका को दे।।12।।"**[13] इसमें खिलौने भी शामिल थे।

"विमर्श–आचार्य वात्स्यायन का कथन है कि नायक को चाहिए कि वह

12. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 69
13. डॉ0 पारसनाथ द्विवेदी, वात्स्यायन कृत कामसूत्रम (2004), चौखम्बा, सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी पृ. 321

नायिका को अनुकूल करने के लिए उसकी पसन्द की तरह–तरह की कुतूहल पैदा करने वाली अद्भुत एवं अपूर्व वस्तुएँ, खिलौने, गुड़िया लाकर दें जो दूसरी लड़कियों के पास न हों और नायिका ने जिन्हें कभी देखा न हों, क्योंकि ऐसी अद्भुत वस्तुएँ पाकर नायिका प्रसन्न होती है और नायक की तरफ मुखातिब होती है। इनके अतिरिक्त नायक रंग–बिरंगी गेंदे, लकड़ी, सींग तथा हाथी दाँत की बनी हुए वस्तुएँ, मोम या मिट्टी की बनी हुई तरह–तरह की गुड़ियाँ, पुतलियाँ तथा रसोई की सामग्री लाकर उपहार में दे और लकड़ी पर उत्कीर्ण स्त्री–पुरूष के मिथुन जोड़े, भेड़–बकरियों के जोड़े तथा देवी–देवताओं की युगल मूर्तियाँ लाकर उपहार में प्रदान करें। इनके अतिरिक्त मिट्टी, बाँस या लकड़ी के बने हुए पिंजरे में तोता, मैना, कोयल, तीतर, बटेर आदि तथा चित्र–विचित्र आकृतियाँ जिस पर बने हों ऐसे जलपात्र, गुलदस्ते, यन्त्र, वीणा, श्रृंगारदान, महावर, चित्र बनाने के लिए तरह–तरह के रंग, चन्दन, कुंकुम, पान, सोपारी, इत्रदान आदि वस्तुएँ लाकर भेंट स्वरूप प्रदान करें। इनमें कुछ वस्तुएँ एकान्त में गुप्त रूप से छिपाकर दें और कुछ वस्तुएँ सबके सामने प्रत्यक्ष में उपहार के रूप में दे और ऐसी वस्तुएँ भी उपहार स्वरूप प्रदान करें जो नायिका को प्रिय हो अथवा जो नायिका के पास न हों तथा जिसे प्राप्त कर नायिका नायक पर अनुरक्त हो जाय।।13–16।।''[14]

शैशुनाग युग – नन्द युग (छठी शती ई.पू. से चौथी शती ई.पू.)/(ई.पू. 600– 325ई. पू. तक) इस काल में मातृ पूजन का विधान था। मातृदेवी के अनेक नमूने मृण्मूर्तियों के रूप में प्राप्त हुए हैं। मातृदेवी अर्थात 'महीमाता' के अनेक रूप सिन्धु घाटी से लेकर पश्चिम एशिया के कई भू–भाग में व्यापाक रूप से प्रचलित थे। वह इस समय में प्रचलित थे। राजघाट उत्खनन से खण्डित मूर्ति इस काल की प्राप्त है जो सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य है। इस युग के खिलौनों के अवशेष प्राप्त नहीं हुए है परन्तु पूर्ववर्ती युगों में तथा बाद के युगों में खिलौनों के प्राप्त अवशेषों से यह प्रतीत होता है कि इस युग में खिलौने बनाये अवश्य जाते होगें। हो सकता है भविष्य में इनकी खोज हो।

मौर्य युग (ई.पू. 325–ई.पू. 184) – इस काल में कौशाम्बी, बक्सर, भीटा (इलाहाबाद), पटना, मगध, बुलंदी बाग, कुमराहार, काम्पिल्य, अहिच्छत्रा, गांधार, अंतरंजित खेड़ा, राजघाट, (वाराणसी) तक्षशिला, हस्तिनापुर आदि स्थलों के उत्खनन से असंख्य मात्रा में मृण्मूर्तियाँ प्राप्त हुईं हैं। इनमें मानवकृतियाँ तथा पशु रूप हैं। इस समय के कुम्हार राज्याश्रित थे। वह राज परिवारों की माँग के अनुरूप मृणमूर्तियों को बनाते

14. डॉ0 पारसनाथ द्विवेदी, वात्स्यायन कृत कामसूत्रम (2004), चौखम्बा, सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी पृ. 321

थे। इस समय की मानवाकृतियों का स्वाभाविक अंकन भी किया गया है।

"मृण्मूर्तियों की एक विशिष्टता है उनके अलंकरण। विभिन्न अलंकरण अभिप्रायों को आहत विधि और उत्कीर्ण विधि द्वारा रूपायित किया गया है। नारी आकृतियों को विविध वस्त्राभूषणों से सुसज्जित किया गया है। इन्हें प्रायः चौड़ा घाघरा, शिरोभूषा, कानों के कमलाकृति से अलंकृत डमरू जैसा बड़ा आभूषण, कुण्डल, कड़ा, कण्ठा, मेखला आदि धारण किये दर्शाया गया है। पटना की नारी आकृतियों में कुछ विशिष्ट भाव–भंगिमा, शरीर की गति, घाघरे के घुमाव से नृत्यरत मुद्रा में बनी जान पड़ती है। हंसते बालक की आकृति भी सुंदर बनी है। इनके संदर्भ में कुमारस्वामी का विचार है कि भाव और कुशल निर्माण की दृष्टि से ये मूर्तियाँ किसी भी काल की भारतीय कला में श्रेष्ठ हैं।"[15]

इस काल की मृण्मूर्तियाँ धार्मिक तथा सामाजिक थी। मानवाकृतियों में स्वाभाविकता का बोध होता है तथा पशु आकृतियों में आहत एवं उत्कीर्ण विधि से अलंकरण किया गया है। इनमें से मातृदेवी, नर्तकी, हाथी, वृषभ, घोड़ा, कुत्ता, मेष एवं मानवाकृतियाँ विशेष थी। पटना व बुंलदीबाग से प्राप्त मानवाकृतियाँ 'यवन' कलाकारों द्वारा निर्मित है क्योंकि इनके चेहरे विदेशी प्रतीत होते हैं।

इस समय मातृदेवी की मूर्तियों को विद्वतजनों ने लोककला के रूप में स्वीकार किया है और उन्हें खिलौना कहकर सम्बोधित किया है।

"इसी लोककला के अन्तर्गत कुछ मिट्टी की मूर्तियाँ आती हैं। इन खिलौनों में अधिकांश मातृदेवी के हैं जो मथुरा, अहिच्छत्रा, पाटलिपुत्र, तक्षशिला आदि स्थानों में मिले हैं। राजसभा से सम्बन्धित कला की प्रेरणा का स्रोत स्वयं सम्राट था। उसी शैली सातिशय प्रभावशाली और मौलिक थी और उसमें उकेरी की ऐसी परिपूर्णता है जो बाद की कला में बहुत कम देखी गई है। इन अवशेषों का देशव्यापी विन्यास ऐसा महत् है कि विश्व के इतिहास में उसकी उपमा नहीं मिलती। लोककला के रूपों की परम्परा पूर्व युगों से काष्ठ और मिट्टी में चली आई थी, पर अब उसे पाषाण के माध्यम से व्यक्त किया जाने लगा, जैसा महाकाय यक्षमूर्तियों में देखा जाता है। कालान्तर की देव मूर्तियों और मानुष मूर्तियों के लिए उन्होंने एक आदर्श स्थापित किया।"[16]

15. एम.के. धवलिकर, मास्टर पिसेस ऑफ इण्डियन टेराकोटज पृ. 21
16. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 99

मौर्य युग में खिलौना साँचे तथा हाथ दोनों प्रकार से बनाये जाते थे।

शुंग युग (ई.पू. 184–ई.पू. 72) – इस युग में मृण्मूर्तियों के अनेक अवशेष विभिन्न स्थानों से प्राप्त हैं। इन प्राप्त अवशेषों से कुम्भकार का कौशल ज्ञात होता है। इस समय मृण्मूर्तियाँ साँचों से बनाना आरम्भ हो गयी थी।

"प्राचीन काल में साँचे से बने खिलौने कला की दृष्टि से इतने मोहक और सुघर ढंग से बने हैं कि उनकी तुलना किसी भी अन्य वस्तु की बनी कला वस्तुओं और मूर्तियों से की जा सकती है। साँचे के बने खिलौनों का प्रचार शुंगकाल में ही अर्थात ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में ही आरम्भ हो गया था। उस काल के खिलौने मथुरा, कौशाम्बी, और राजघाट(बनारस) से काफी मिले हैं।"[17]

इसके पूर्व साँचे का प्रयोग केवल मुखाकृति बनाने के लिए किया जाता था। दोहरे साँचे के प्रयोग से मृण्मूर्तियाँ अधिक संख्या में बनना प्रारम्भ हो गयी थी और कुम्हारों का बाजार से सीधा सम्बन्ध हो गया था। साँचे को **'संचक'** तथा **'मातृका'** भी कहा जाता था।

शुंग युग में "अधिक संख्या में इनके निर्माण से इस कला ने उद्योग का रूप धारण कर लिया और बाजार में विक्रयार्थ हेतु अपना स्थान बनाने में इन्हें सफलता मिली।"[18] इस सफलता का कारण था कि मृण्मूर्तियों की मांग समाज में बढ़ने लगी थी। यह सामाजिक तथा धार्मिक कार्यो का हिस्सा बन गयी थी। इस युग में कुम्हारों का बहुमुखी विकास हुआ था।

इस समय सर्वाधिक पकी मिट्‌टी के टिकरे 'दृश्य फलक' बनाये गये थे जिन पर ऊपर की ओर दो छिद्र थे, शायद ये इन्हें टाँगने के लिए बनाये गये हो। यह उभार पद्धति से बने हुए हैं। इनके विषय सामाजिक जीवन से जुड़े हुए थे, मिथुनाकृतियाँ, उत्सवदृश्य, सर्कस, बैलगाड़ी में पिकनिक दृश्य, वृषभ युद्ध, उद्यान में युगल, मेला दृश्य, अक्षर सीखता बालक, मुर्गा युद्ध एवं बौद्ध कथानक आदि प्रमुख थे। इन फलकों के साथ मानव, देव, पशु तथा खिलौने आदि भी प्राप्त हुए है। इनमें

17. श्री परमेशवरी लाल गुप्त, गंगा घाटी के मिट्‌टी के खिलौने, सम्मेलन पत्रिकाः लोक संस्कृति अंक (1995), पृ. 326
18. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 37

से ''श्री'' रूपदेवी की मूर्ति, कुबेर, पंखदेवी, सूर्य देव, यक्ष मूर्तियाँ, गज लक्ष्मी की मूर्ति, देवी वसुधा की मूर्ति, देवी महिषमर्दिनी विशेष है जो बसाढ़, ताम्लुक, लौरिया नंदनगढ़, कौशाम्बी, चंदकेतुगढ़, हरिनारायणपुर, वानगढ़ एवं मथुरा आदि से प्राप्त हुई है। मातृदेवी की अनेक मृण्मूर्तियाँ मथुरा से प्राप्त है। इनके साथ–साथ पशु आकृतियाँ, मेष, हाथी, बैल, मकर, घोड़े आदि की तथा घोड़े पर सवार मानवकृति, नग्न बच्चा, रथ आदि खिलौनों की भी कृतियाँ प्राप्त है। मेढ़े से जुती गाड़िया अर्थात रथ के खिलौना रूप, दूसरी सदी से पूर्व से पूर्व शुंग काल तक प्रचलित थे।

''काली मिट्टी से निर्मित विभिन्न पशुओं की आकृतियाँ भी मथुरा से प्राप्त हुई हैं, जिनमें अधिकता गज की है। इसे आभूषणों से सजाया भी गया हैं। अहिच्छत्रा से ज्ञात बैठे वृषभ की आकृति स्वभावजन्य रूप को प्रदर्शित करती है। दोनों ही प्रकार की पशु मृण्मूर्तियाँ पूर्णतः हाथ से बनी हुई हैं। इसके अतिरिक्त रथ आदि एवं अनेक प्रकार के खिलौने भी ज्ञात हैं।''[19]

इस समय की सामान्यतः मृण्मूतियाँ लाल रंग की थी परन्तु मथुरा से प्राप्त मृण्मूर्तियाँ काले रंग की थी। इस युग के अवशेष प्रायः बसाढ़ (प्रा. वैशाली), अहिच्छता, कोसम, बुलन्दीबाग (बिहार), राजघाट, बानगढ़, ताम्लुक, चंदकेतुगढ़, हरिनारायणपुर, लौरियानदंन गढ़, पाटिलपुत्र, मथुरा, कौशाम्बी, मूसानगर (कानपुर), आदि से प्राप्त हुए हैं।

''साँचे से निकालने के पश्चात् कुम्हार कदाचित उसे हाथ से कुछ सजाते–सँवारते रहे हों, पर इनकी सम्भावना कम ही ज्ञात होती है। हाँ, उन्हें पकाने से पूर्व उसे मिट्टी के पतले रंग से वे रंग अवश्य देते थे, जिससे पकने पर खिलौनों का रंग गहरा लाल या चमकता हुआ काला हो जाता था। प्रायः अधिकांश खिलौने लाल रंग के पाये गये हैं, जो हल्के गाढ़े सभी तरह के हैं। कुछ खिलौने भूरे और काले रंग के भी पाये गये हैं, पर इनकी संख्या कम है। अधिकांशतः इस रंग के खिलौने मथुरा से मिले हैं और वे शुंगकाल के हैं। इन काले खिलौनों पर काले रंग की हल्की पर्त भी पायी जाती है, जो आसानी से छूट जाती है। जान पड़ता है कि यह रंग उनके

---

19. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 38

ऊपर बाद में लगाया जाता था। पटना और कौशाम्बी से भी मिले कुछ खिलौने काले अथवा भूरे रंग के हैं, पर उनकी संख्या इनी–गिनी है।''[20]

इसके साथ–साथ इस युग में विभिन्न विषयों पर 'टिकरे' पाये गये है जिन्हें कुछ विद्वानों ने खिलौना कहकर सम्बोधित किया। जबकि ऐसा अनुमान है कि यह घर को सजाने के लिए टाँगे जाते होंगे अर्थात इनका उपयोग सजावट में होता होगा।

''शुंग कालीन खिलौनों की लोक व्यापी टकसाली शैली उन चौकोर टिकरों में पायी जाती है।''[21] यह टिकरे लघु आकार के बने थे तथा इन पर दृश्यांकन थे। **''कौशाम्बी से प्राप्त प्रयाग संग्रहालय में एक टिकड़ा है (21/4×21/4 इंच) जिस पर आपानगोष्ठी का दृश्य है।''**[22] लघु आकार के होने के कारण इन टिकरों को खिलौना कहा गया, ऐसा प्रतीत होता है।

कुषाण युग (ई.पू. 50–300 ई.) – इस युग में मृण्मूर्तियों के साथ–साथ पाषाण मूर्तियों का प्रचलन अधिक बढ़ गया था। इसके पश्चात् भी मृण्मूर्तियाँ में अनेक प्रयोग देखने को प्राप्त हुए, विशेष रूप से वृहद् आकार की मृण्मूर्तियों का बनाना। इस समय का जनमानस अपने घरों में देव–मूर्तियों की स्थापना करने लगा था। इसी प्रवृत्ति के कारण बड़ी–बड़ी मानवाकार मृण्मूर्तियों की रचना होने लगी थी। इन पर गहरे लाल रंग की ओप की सतह चढ़ी थी। इस काल की मृण्मूर्तियों के सांस्कृतिक अवलोकन से ज्ञात होता है कि इन मृण्मूर्तियों में गांधार शैली के तत्वों का समावेश भी यदा–कदा दिखाई देने लगा था। मातृदेवी की मृण्मूर्तियाँ एवं फलक इस समय भी प्रचलित थी। देव मूर्तियों के साथ बोधिसत्व की अनेक मृण्मूर्तियाँ भी प्रकाश में आई थी। खिलौनों के अवशेष के बनगढ़ (बंगाल), अहिच्छत्रा व मथुरा से प्राप्त हुए हैं लेकिन इनकी संख्या कम है तथा यह उन्नत किस्म के नहीं हैं। खिलौनों में **'नंगे बबुआ'** एवं **'यमपुष्कर'** पोखर के साथ सीढ़ीदार मकान जिसमें बाजा बजाने आकृतियाँ भी है। यह पूजन के काम आती थी, आदि बहुसंख्या में प्राप्त हुए हैं।

''कुषाण कालीन मृण्मूर्तियों के प्रमुख निर्माण केन्द्र मथुरा और तक्षशिला हैं।

20. श्री परमेशवरी लाल गुप्त, गंगा घाटी के मिट्टी के खिलौने, सम्मेलन पत्रिकाः लोक संस्कृति अंक (1995), पृ. 327
21. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 325
22. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 324

इसके अतिरिक्त ताम्लुक, पटना, राजघाट, कौशांबी, अहिच्छत्रा आदि स्थलों से भी उनके उदाहरण ज्ञात है। इनका विषय क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है। इनमें अधिकता देव एवं मानव आकृतियों की है। देव मूर्तियों के संदर्भ में प्रतीत होता है कि उस काल का मानव अपने घर में देव को स्थापित करके पूजने की इच्छा रखता था। इतनी अधिक संख्या में न तो प्रस्तर मूर्तियां सुलभ थीं और न ही महंगी होने के कारण जनसामान्य द्वारा उनका क्रय सरल था। इस दृष्टि से मृण्मूर्तियों ने अहम भूमिका निभाई। देव आकृतियों में उल्लेखनीय है शिव, कार्तिकेय, गणेश, सूर्य, कामदेव, दुर्गा,महिषमर्दिनी, सप्त मातृकाएं, बुद्ध और बोधिसत्व। यक्ष–यक्षिणी, नाग–नागी, किन्नर, गण, हारिति, वसुंधरा आदि की आकृतियाँ भी मिट्टी से बनी।''[23] ''कुषाण युग के पार्थिव खिलौने प्रायः घटिया किस्म के हैं और उनकी बनावट भोंडी है।''[24]

''कुषाण–काल में भी युवतियों के ये टिकरे काफी पाये जाते हैं। इस काल की युवतियों के सुन्दरतम नमूने मथुरा से मिले शाल–भंजिका मुद्रा के टिकरे हैं, जो आजकल मथुरा संग्रहालय में है।''[25]

शक–सात वाहन युग (ई.पू. 200–225 ई.)– इस समय की मृण्मूर्तियाँ दोहरे साँचे से बनायी गयी थीं। इनमें अलंकरण का विशेष ध्यान रखा गया था। यह अत्यन्त सुन्दर थीं। मृण्मूर्तियों में मानव रूप एवं पशु–पक्षी की आकृतियाँ तथा खिलौनों में हाथी, घोड़े, सिंह, तोता, वृषभ, घुड़सवार, युगल, सूकर, मछली व सैनिक आदि के अवशेष प्राप्त हुए हैं। हैदराबाद के कोण्डापुर स्थान पर सातवाहन युग के जो खिलौने प्राप्त हुए हैं, वह 'क्योलिन' नामक श्वेत मिट्टी के बने हुए हैं। इस काल में मातृदेवी की मूर्तियाँ भी बनाई गयी थीं।

''शक–सातवाहन युग में दक्षिणापथ की पार्थिव कला या मृण्मूर्तियों में विशेष सौन्दर्य भी देखा जाता है (प्रथम–द्वितीय शती)। हैदराबाद के कोण्डापुर स्थान से इस प्रकार के बहुसंख्यक सातवाहन खिलौने मिले हैं। यह क्योलिन नाम की सफेद मिट्टी के बने हैं। वे भीतर से पोले हैं और दो या अधिक साँचों में दबकर निकाले गये

---

23. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 60
24. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 329
25. श्री परमेशवरी लाल गुप्त, गंगा घाटी के मिट्टी के खिलौने, सम्मेलन पत्रिकाः लोक संस्कृति अंक (1995), पृ. 327

हैं, पहले साँचों में कच्चे बनाकर तब उन्हें बनाकर तब उन्हें जोड़कर पकाया जाता था। कुछ पर रंग देकर उन्हें वर्णचित्रित भी किया गया।''[26]

इस युग मे बहुत सी पशु–पक्षी की आकृतियाँ तोता, सिंह, मेढ़ा, वृषभ, घोड़ा आदि भी प्राप्त हुई है जो खिलौना रूप में हैं। इस समय मिट्‌टी से बनायी गयी कलाकृतियों की लोकप्रियता बहुत थी। वृहद तथा लघुआकार की मृण्मूर्तियाँ बनायी गयीं। लघु आकार की मृण्मूर्तियाँ बच्चों के खेलने के खिलौने थे तथा वृहद् आकार की पूजन तथा सजाने के कार्य में प्रयुक्त होती थी। 'क्योलिन मिट्‌टी से निर्मित नाजुक खिलौने प्रायः सजाने के कार्य में ही प्रयुक्त किय जाते होगे। इस काल में खिलौनों की लोकप्रियता थी।

''सातवाहन काल में इस कला की लोकप्रियता इतनी बढ़ गई थी कि इसके संदर्भ में कुछ कथानक प्रचलित हो गए। एक कथानक के अनुसार एक सातवाहन शासक अपनी बालावस्था में मिट्टी के सैनिकों से और घोड़े के खिलौनों से खेला करता था। बाद में उन खिलौनों में प्राण प्रस्फुटित हो गया और उन्होंने अपने स्वामी के विजय कार्य में सहायता पहुँचाई। इस कथा से संबंधित दृश्य की पहचान जग्गयपेट्ट से ज्ञात एक फलक पर की गई है। इस फलक पर राजकुमार को हाथी, घोड़े के खिलौनों से खेलते दिखलाया गया है।''[27]

मिट्‌टी की मृण्मूर्तियाँ कोल्हापुर, पैठण, टेर, नेवासा (महाराष्ट्र), कोंडापुर, नागार्जुन कोंड, धराणीकोट, अमरावती (आन्ध्र प्रदेश), वनवासी, सन्तति (कर्नाटक) आदि स्थानों से अधिक संख्या में प्राप्त हुईं हैं।

गुप्त युग (275ई.–500ई.) – गुप्तकाल में मृण्मयकला अपने चरमोत्कर्ष पर थी। मृण्मय मूर्तियों के अतिरिक्त **''टेराकोटा मंदिर''** निर्मित किये गये और उन देवी–देवताओं एवं सामाजिक जीवन से सम्बन्धित दृश्य–फलक लगाये गये। मंदिरों के खम्बे तथा पट्‌टियों में सजावटी अलंकरण किया गया। उत्तर प्रदेश के कानपुर देहात जनपद के भीतरगाँव, मध्य प्रदेश के सीरपुर का लक्ष्मण मंदिर, अहिच्छत्रा के त्रिमेधि एड्रक शिव मंदिर तथा बीकानेर का रंगमहल इस कला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। इस समय पकी

---

26. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 331
27. अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल पृ. 73

मिट्टी के अलंकृत **'बौद्ध स्तूप'** भी बनाये गये जिनमें मीरपुर खास (सिंध), श्रावस्ती, पहाड़पुर, सारनाथ, बोगरा (महास्थान) तथा नालन्दा का स्तूप प्रसिद्ध हैं। इनमें मृण्मूर्तियों की सजावट भी देखने को प्राप्त होती है। इस युग की मृण्मूर्तियाँ केवल बाजारों तक सीमित नहीं थीं, उनका प्रयोग घर, महल, मंदिर एवं स्तूप को सजाने के लिए किया जाने लगा था। मृण्मूर्तियों के विषय देवी–देवता, महात्मा बुद्ध, संगीतज्ञ, मिथुन आकृतियाँ, सैनिक, मातृत्व, शाल–भंजिका, किन्नर, झूला झूलती स्त्री आदि विशेष थे। इनके प्राचीन अवशेष अनेक स्थानों से प्राप्त हुए हैं।

लोक जीवन से सम्बन्धित लघु दृश्य–फलक एवं खिलौनों की कलात्मक अभिव्यक्ति विशेष रूप से इस काल में बहुसंख्या में की गयी। इनके सौन्दर्य को देखकर कुम्हार की दक्षता का बोध होता है। इस युग में कुम्हारों का समाज में समादर था, वह आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे। **"गुप्तकाल में कुम्हारी कला अपने चरम विकास पर पहुँच गयी थी। कुम्हारों ने मिट्टी के बर्तनों तथा खिलौनों मे नयी–नयी डिजाइनें पैदा कीं, जिससे इनका धंधा अधिक चालू हो गया था। जैन–सूत्रों से पता चलता है कि पोलसपुर के सछात–पुत्र नामक धनिक कुम्हार के पास 500 दुकानें थीं जहाँ मिट्टी के बर्तन और खिलौने बिकते थे। उस समय मिट्टी के खिलौने कई प्रकार के बनते थे–कुछ ठोस होते थे, कुछ भरावदार जो साँचो द्वारा बनते थे और कुछ टिकरों में। ठोस खिलौने की हर एक आकृति को अलग–अलग बनाया जाता था, जिसमें अधिक मिट्टी और मेहनत लगती थी। अलग–अलग बनने से आकृतियों में भी अन्तर पड़ता था। अस्तु उसका सुधरा हुआ स्वरूप भरावदार खिलौने होने लगे जिन्हें साँचों में भर कर बनाया जाता था। पहिले एक तरफा साँचा बना, फिर दो पाटों वाला–दो पाटों वाले साँचे अधिक उपयोगी सिद्ध हुए और वे आज तक काम मे लाये जाते हैं"।**[28]

गुप्त काल में रंगीन उभार चित्र भी मिट्टी के प्राप्त हुए है जो घर में टाँगने के लिए बनाये जाते थे।

"गुप्तकालीन मृण्मूर्तियों में सौन्दर्यपूर्ण संरचना लोक–जीवन से संबंधित कृतियों में दर्शनीय है। छोटी आकृतियों के ऊपरी भाग में बने छिद्र से घर में उनको लटकाकर सजाने के उद्देश्य से प्रयुक्त हुये हैं। स्त्रियों की केश सज्जा विशिष्ट है

---

28. श्री हरिचरण लाल, मिट्टी के खिलौनों की कला का ऐतिहासिक वृत्त, सम्मेलन पत्रिक : कला अंक (1987) पृ. 355

तथा आकृतियों को अनेक विषयों के साथ दिखलाया गया है। जैसे–मिथुन, किन्नरमिथुन, उत्तेजक दृश्य, घटवाहिका, माँ–पुत्र, शाल–भंजिका। कुम्हराहार, पहाड़पुर, राजघाट से प्राप्त स्त्री मूर्तियाँ सुन्दर हैं। पशु आकृतियाँ काल्पनिक और स्वाभाविक दोनों रूपों में दर्शित हैं। पुरुषों को विविध वाद्ययंत्र बजाते, सैनिक वेश में खड़े ध्यानस्त, विभिन्न क्रियाओं को करते दर्शाया है। देव आकृतियों में विष्णु, शिव, सूर्य, कार्तिकेय, गणेश, पार्वती, महिषामर्दिनी एवं गंगा–यमुना है।

राजघाट से प्राप्त एक विष्णु मूर्ति को चक्र, गदा के साथ जंघिका और वनमाला धारण किये दर्शाया है। महिषामर्दिनी को चतुर्भुजी, षड़भुजी और अष्टभुजी रूप में दर्शाया है। इस प्रकार दृश्यांकन सहित फलक, मंदिर और स्तूप पर अधिक संख्या में लगाये गये। सहेत–महेत, भीतर गाँव और पटना के मंदिरों में रामायण, महाभारत और पुराणों के दृश्य फलक लगे थे।''[29]

गुप्तकाल के खिलौनों की एक विशेषता यह थी कि इनको सुन्दर बनाने के लिए आँख, वस्त्र व केश आदि में रंग–बिरंगा चित्रांकन किया जाता था। रंगीन खिलौनों की उत्कृष्ट परम्परा का प्रारम्भ यहीं से माना जाता है।

''गुप्त युग में कला की दृष्टि से सुन्दर खिलौने बनते थे, किन्तु उन्हें और भी सुंदर बनाने के लिए उन पर केश, आँख, वस्त्र आदि की सजावट रंग–बिरंगी चित्रकारी से की जाती थी। ऐसे कई नमूने अहिच्छत्रा, राजघाट, भीटा आदि की खुदाई में मिले हैं। गुप्त युग में बड़े आकार की मृण्मूर्तियाँ भी बनाई जाने लगीं, जैसी पाषाण की प्रतिमाएँ होती थीं। अहिच्छत्रा से शिवमंदिर में लगी हुई गंगा और यमुना की लगभग कायपरिमाण मृण्मूर्तियाँ मिली हैं। इस संबंध में साहित्यिक उल्लेख भी प्राप्त हैं। बाण ने लेप्यकार और पुस्तकृत् नाम से मिट्टी और गचकारी के खिलौने बनाने वाले दो ढंग के कारीगरों का उल्लेख किया है। बुद्धघोष ने मिट्टी की इस कला को 'पोत्थक रूप' कहा है।''[30]

इस प्रकार की इकरंगी रंगाई के अतिरिक्त गुप्त काल में खिलौनों को रंग–बिरंगा भी बनाते थे। राजघाट (बनारस) की खुदाई में अनेक खिलौनों पर विभिन्न प्रकार के रंग पाये गये हैं। इनके खिलौनों पर बालों को काले रंग से रंगा गया है।

---

29. डी. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास (2008), रा.हि.ग्र. अकादमी, जयपुर पृ. 510
30. वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी पृ. 321

कपड़े धारीदार है। चेहरे पीले रंग से रंगे गये हैं। इन्हें देखने से ब्रश के कुशल प्रयोग का अनुमान होता है। केशों को बड़ी बारीकी के साथ अनेक खिलौनों पर अंकित किया गया है। रंगीन खिलौने मिले हैं। गंगा घाटी के बाहर काबुल के निकट शाहगिर्द से अनेक गुप्तकालीन रंगीन नारी मस्तक मिले हैं, जो काबुल संग्रहालय में रखे हुए है।''[31]

इस युग के मृण्मूर्तियों के शिल्पावशेष एवं खिलौने अधिकांशता बक्सर, श्रावस्ती, कौशाम्बी, सारनाथ, राजघाट (प्रा.वाराणसी), नन्दनगढ़, महास्थान, कुम्हराहार, कसिया, पटना, अहिच्छत्रा, भीटा, बसाढ़, पवाया (प्राचीन पद्यावती), बनगढ़ (बंगाल), सहरी बहलोल, तख्त ए बाही, जमालगढ़ी (पंजाब), मथुरा, कानपुर देहात, घोसी–आजमगढ़ (उ.प्र.) हरवन (कश्मीर), शाहगिर्द (काबुल) एवं मीरपुर खास, ब्रह्ममणवाद (सिंध) आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं।

गुप्तकाल के पश्चात् (500ई.–1800ई.)– यानि मध्य काल में नवीं शताब्दी तक खिलौनों के अवशेष प्राप्त हैं, इस कला के साथ–साथ इस समय पत्थर के शिल्पों में अधिकता से कार्य होने लगा था। गुप्तकाल के पश्चात् इन तेरह सौ वर्षो में मिट्टी के खिलौने के अवशेष न के बराबर प्राप्त हुए। **''लगभग आठवीं–नवीं शताब्दी के पश्चात् की मिट्टी की कला के नमूने आजकल उपलब्ध नहीं हैं''।**[32] लेकिन इसका यह तात्पर्य नही है, कि मिट्टी के खिलौने प्रायः बनना बन्द हो गए होंगे। यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि विष्णुपुर (पश्चिम बंगाल) के टेराकोटा मंदिर, मध्यकाल (16वीं से 18वीं तक) में ही बने हैं। जिन पर विभिन्न टेराकोटा दृश्यफलक लगे हुए हैं।

''यह मंदिर उन्नत किस्म की टेराकोटा नक्काशी के लिए विशाल है। ये नक्काशी मंदिरों की पूरी दीवारों में मौजूद है।''[33] इन मंदिर का निर्माण सन् 1653 से 1694 ई. के मध्य हुआ है। इनमें सबसे प्रमुख मंदिर श्याम राव मंदिर है। इन मंदिर के फलकों पर पौराणिक आख्यान, रामायण, महाभारत की कथाएँ, कृष्ण–राधा के

---

31. श्री परमेशवरी लाल गुप्त, गंगा घाटी के मिट्टी के खिलौने, सम्मेलन पत्रिकाः लोक संस्कृति अंक (1995), पृ. 327
32. श्री परमेशवरी लाल गुप्त, गंगा घाटी के मिट्टी के खिलौने, सम्मेलन पत्रिकाः लोक संस्कृति अंक (1995), पृ. 331
33. श्री एस.एस. विश्वास, विष्णुपुर (2006), भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण, नई दिल्ली, पृ. 327

जीवन पर आधारित दृश्य, सामाजिक जीवन, ग्राम्य जीवन एवं शिकार के दृश्य बनाये गये हैं।

यह उत्कृष्ट किस्म की टेराकोटा कला है। इससे प्रतीत होता है कि मिट्टी कला जीवित थी। इस समय रचित विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों में एवं साहित्यिक पुस्तकों में इनके स्वरूपों की चर्चा प्राप्त होती है। इस काल के खिलौनों के अवशेष न प्राप्त होने के दो कारण हो सकते हैं एक तो धार्मिक आस्था स्वरूप पूजित मृण्मूर्तियों को नदी में विसर्जित किये जाने के कारण तथा दूसरा खिलौनों के टूट जाने एवं खण्डित हो जाने की स्थिति में फेक दिये जाने के कारण। मानव जीवन में इनकी सार्थकता से प्रतीत होता है कि प्रत्येक युग में इनकी उपयोगिता एवं महत्व रहा है, इनकी रचना का चक्र सदैव चलता रहा है।

"भारतीय संदर्भ में यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है, कि शिल्पकला में निर्माण का मूल आधार केवल मिट्टी ही थी। बाद में केवल निर्माण प्रक्रिया तथा यंत्रों से परिवर्तन के साथ यह लकड़ी, धातु तथा पत्थर में भी प्रचलित हुई।"[34]

आधुनिक काल (1850 ई.–आज तक)– खिलौनों एवं मृण्मूर्तियों का जो वर्तमान स्वरूप हैं वह पारम्परिक अनुकरण एवं प्राचीन अवशेष का अनुकरण के रूप में प्राप्त है इनका विकास खिलौने से प्रारम्भ होकर पात्र, मृण्मूर्ति, मृत्फलक, मंदिर एवं स्तूप से पुनः खिलौनों पात्रों एवं धार्मिक मूर्तियों पर वापस आकर ठहर गया है। इस समय भारत के प्रत्येक राज्य जहाँ काली मिट्टी की उपलब्धता है, वहाँ इनका बनाना शैलीगत परिवर्तन के साथ निरन्तर जारी है। इनकी उपयोगिता एवं सार्थकता प्राचीन काल से ज्यों की त्यों बरकरार है। यह मानवीय मूल्यों की रक्षा में अहम भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं। खिलौनों का राज्यवार विवरण, जितनी जानकारी प्राप्त हुई उसके आधार पर आगे दी गयी है।

इस प्रकार खिलौनों का आठ हजार वर्ष की यात्रा का वर्तमान स्वरूप मानव की अभिव्यक्ति एवं मनोरंजन व धार्मिक आस्था का प्रमुख साधन रही है। खिलौने विभिन्न युगों के अनेक उतार चढ़ाव के साथ अपनी निरंतरता बनाये हुए हैं। खिलौनों के अवशेष पूर्व सिन्धु सभ्यता काल, उत्तर सिन्धु काल एवं मध्य काल अर्थात प्रथम ई. पू. 4000 से ई.पू. 2700, द्वितीय ई.पू. 1700 से ई.पू.400 तथा तृतीय 500 ई.पू.से 1800

---

34. कमलादेवी चट्टोपाध्याय, भारतीय हस्तशिल्प परम्परा (1991), प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली पृ. 22

ई. तक तीन अन्तराल हैं, जिसके अवशेष न के बराबर प्राप्त हुए हैं, जिनकी खोज आवश्यक है।

हाथ से प्रारम्भ हुआ, खिलौने बनाने का सफर, साँचों के तकनीकी विकास के साथ अपने चरमोत्कर्ष तक जा पहुँची है। प्राचीन काल में ये एक रंगी लाल, धूसर व काले रंग के बनाये गये। गुप्त युग में खिलौने के रंगीन होने के प्रमाण प्राप्त हुए हैं। आधुनिक युग में ये रंग–बिरंगे बनाये जाने लगे। अन्य कलाओं की भाँति खिलौने बनाने की कला वर्तमान युग में सार्थक तथा विशेष है। इसका महत्व सामाजिक जीवन में उतना ही है जितना प्राचीन काल में था।

मिट्‌टी के खिलौनां का वर्णन मुंशी प्रेमचन्द्र (1880–1936) की कहानी 'ईदगाह' में आया है। यह कहानी लगभग नब्बे दशक पूर्व लिखी गयी है। इससे सिद्ध होता है कि 19वीं शताब्दी में खिलौने समाज में प्रचलित थे। इस कहानी में खिलौनों के प्रति बच्चों की ललक, स्वाभाविक लगाव को कहानीकार ने बखूबी से दर्शाया है साथ ही मानवीय संवेदना व बालमन का आत्मिक चिन्तन के दर्शन को बड़ी सजीवता से दिखाया है।

इस कहानी में ईद के मेले का दृश्य है। नमाज़ खत्म हो गई है। लोग आपस में गले मिल रहे हैं। बालक हामिद, नूरे, अहमद, मोहसिन व सम्मी आपस में बात कर रहे हैं।

"यह चर्खी है, लकड़ी के हाथी, घोड़े, ऊंट छड़ों से लटके हुए हैं। एक पैसा देकर बैठ जाओं और पचास चक्करों का मजा लो। महमूद और मोहसिन, नूरे और सम्मी इन घोड़ों और ऊंटों पर बैठते हैं।

हामिद दूर खड़ा है। तीन ही पैसे तो उसके पास हैं। अपने कोष का एक तिहाई, जरा–सा चक्कर खाने के लिए, वह नहीं दे सकता।

सब चर्खियों से उतरे हैं। अब खिलौने लेंगे। इधर दुकानों की कतार लगी हुई है। तरह–तरह के खिलौने हैं–सिपाही और गुजरिया, राजा और वकील, भिश्ती और धोबन और साधु। वाह! कितने सुन्दर खिलौने हैं। अब बोलना ही चाहते हैं।

अहमद सिपाही लेता है, खाकी वर्दी और लाल पगड़ीवाला, कंधे पर बन्दूक रखे हुए। मालूम होता है, अभी कवायद किए चला आ रहा है। मोहसिन को भिश्ती पंसद आया। कमर झुकी हुई, ऊपर मशक रखे हुए हे। मशक का मुंह एक हाथ से

पकड़े हुए है। कितना प्रसन्न है। शायद कोई गीत गा रहा हैं बस, मशक से पानी उड़ेलना ही चाहता है।

सिपाही एवं गुड़िया पकी मिट्टी 1968

नूरे को वकील से प्रेम है। कैसी विद्वता है उसके मुख पर। काला चोगा, नीचे सफेद अचकन के सामने की जेब में घड़ी, सुनहरी जंजीर, एक हाथ में कानून का पोथा लिए हुए है। मालूम होता है, अभी किसी अदालत में जिरह या बहस किए चले आ रहे हैं। यह सब दो–दो पैसे के खिलौने हैं।

हामिद के पास कुल तीन पैसे है, इतने मंहगे खिलौने वह कैसे ले? खिलौना कहीं हाथ से छूट पड़े तो चूर–चूर हो जाए। जरा पानी पड़े तो सारा रंग धुल जाए। ऐसे खिलौने लेकर वह क्या करेगा, किस काम के ?"[35]

यह कहानी खिलौनों पर केन्द्रित है तथा खिलौनों की उपयोगिता, सार्थकता के साथ समाज के मानवीय रूप को प्रतिबिंबित करती है। विदित हो कि मुंशी

---

35. मुंशी प्रेमचंद्र, प्रेमचन्द्र की सर्वश्रेष्ठ कहानियां (2005), साधना पब्लिकेशन, दिल्ली पृ.31

प्रेमचन्द्र का कार्यक्षेत्र बनारस, लखनऊ के साथ कानपुर भी रहा है। यह कहानी इन्हीं शहरों के इर्द–गिर्द घूमती दिखाई देती है। ईदगाह के दृश्यांकन से प्रतीत होता है कि उ.प्र. में खिलौने 100 वर्ष पूर्व कितने लोक प्रचलित थे। इस प्रकार खिलौनों का ये अविरल क्रम आज भी चलता चला आ रहा है और समाज में अपना यथा स्थान बनाये हुए हैं।

16 सेमी. सिपाही 2005

❑❑❑

5

भारत के राज्य और खिलौना

भारत के प्रत्येक भू'–भाग में मिट्टी के खिलौने किसी न किसी रूप में बनाये जाते हैं। यह पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल होते हैं। शनैः–शनैः वर्तमान में इनका महत्व, भारतीय सामाजिक जीवन में कम होता जा रहा है परन्तु भारतीय सांस्कृतिक–जीवन में इनका स्वरूप इतना सशक्त है कि आधुनिकता के युग में ये अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं तथा लोक जीवन में इनका प्रभाव इतना प्रभावी है कि खिलौना बनाने की लोकशैली अभी तक जीवित है। पर्व–मेलों, तीज–त्यौहार एवं धार्मिक व ऐतिहासिक स्थलों में इनकी उपयोगिता दिखाई देती है। यदि इन अवसरों अथवा स्थानों में, ये न दिखाई पड़े तब त्यौहार या मेला फीका सा सा प्रतीत होता है।

मिट्टी के खिलौने किसी शैली अथवा राज्य या शहर के हो, इनकी अबोधता व सरलता ही इनकी मुख्य विशेषता है, जो मन को आकर्षित करती है और इनके रूपों की सहजता तथा रंगों का चटकपन मन को प्रफुल्लित करता है। खिलौनों का सृजन नगरीय, ग्रामीण अथवा आदिवासी क्षेत्र, कहीं पर भी हुआ हो, इनके लोकाकार में लोक–संस्कृति, लोक विश्वास तथा सामाजिक जीवन की झलक एवं परम्परा का अनूठा संगम, अवश्य दिखाई देता है।

भारत के विभिन्न राज्य असम, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, पॉडिचेरी, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्रा प्रदेश, केरल, गोवा, पश्चिम बंगाल, गुजरात, दिल्ली, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उत्तराखण्ड आदि राज्यों में खिलौना बनाने की प्राचीन परम्परा है। इन राज्यों में इनके रूपों के सृजन में, स्थानीय परम्परा के अनुरूप, इनमें लोकपन दिखाई देता है।

पश्चिम बंगाल के कलकत्ता, कृष्णा नगर (जिला नदिया), जय नगर, विष्णुपुर, बांकुड़ा, राजगढ़, शान्ति निकेतन एवं मिदिनापुर के मिट्टी के खिलौने

प्रसिद्ध हैं। यहाँ के खिलौने जीवन्त होते हैं। यह रंगीन तथा टेराकोटा रंग के बनाये जाते हैं। कृष्णा नगर के खिलौने यथार्थ शैली के बोलते हुए से प्रतीत होते हैं। इनकी स्वाभाविक सुन्दरता विश्व प्रसिद्ध है। इन्हें 'पाल' जाति के कुम्हार बनाते हैं। इन खिलौनों में कुम्हारों की कुशलता के दर्शन निहित हैं। यह शीर्षक पर आधारित जैसे–गाँव का दृश्य, धार्मिक आकृति, देवी–देवता एवं रोजमर्रा के दृश्य आदि के रूप में, समूह में बनाये जाते हैं। इनका शारीरिक सौष्ठव एवं सौन्दर्य स्वाभाविक होता है, इनकी भाव–भंगिमा विषयानुकूल होती है। यह खिलौने स्थानीय 'घूरनी' नदी से प्राप्त मिट्टी से बनाये जाते हैं। इन कुम्हारों के बच्चे परम्परागत प्रकार से इन्हें बनाना सीखते है तत्पश्चात् यह युवा होते – होते इस विधा में दक्ष हो जाते हैं। यहाँ के खिलौनों में वस्त्र, आभूषण तथा साज–सामग्री आदि विवरण सहित बनाकर, इन्हें अलग से पहनाई जाती है। बांकुड़ा के घोड़ा, गणेश जी, ढाक बजाता पुरुष, घरेलू कार्य करती एवं पढ़ती स्त्री खिलौना प्रसिद्ध है। विष्णुपुर में मिट्टी का शंख, खिलौना अद्वितीय है।

महाराष्ट्र के पुणे में मराठी लोक जीवन के विभिन्न खिलौने बनाये जाते हैं। इनकी वेशभूषा में स्थानीय परम्परागत मराठीपन झलकता है। वीर शिवा जी से सम्बन्धित खिलौने विशेष प्रसिद्ध हैं। गुजरात के भावनगर के 'बोताद' गाँव में चिड़ियाँ एवं मछली के आकार की सीटियाँ बहुत प्रसिद्ध है। अहमदाबाद में मिट्टी के खिलौने देखते बनते हैं। हरियाणा के लोहारू, झज्जर, फिरोजपुर, रोहतक एवं फरीदाबाद में बड़े आकार के खिलौने बनाये जाते हैं। इनकी शैली में राजस्थान की झलक दिखाई देती है। राजस्थान के जयपुर, अलवर, उदयपुर, जैसलमेर, भुज व कच्छ में स्थानीय परम्परागत कलात्मक व रंग–बिरंगे खिलौने बनाये जाते हैं। गणेश भगवान एवं गणगौर की मूर्ति बनाने का विधान सम्पूर्ण राजस्थान में है। इसके साथ–साथ राजा–महाराजा, रानी, स्त्री–पुरुष, पनिहारिन, घुड़सवार, रथ आदि भी बनाये जाते हैं।

छत्तीसगढ़ के सरगुजा जनपद में कच्ची मिट्टी के अद्भुत खिलौने बनाये जाते हैं। यह एकल तथा सामूहिक दोनों प्रकार के होते हैं। इनके विषय आदिवासी जीवन पर आधारित होते हैं और इनके लोकाकार भी आदिवासी रूपों पर आधारित होते है। इसके साथ–साथ पशु–पक्षियों की आकृतियाँ भी बनायी जाती है जो वन्य जीवन से इनके जुड़ाव की कहानी को बंया करते हैं। छत्तीसगढ़ के ही नवगढ़,

पाटियाडीह, कुम्हारपारा, रायगढ़ आदि में भी पशु–पक्षियों के खिलौने बनाये जाते हैं। यहाँ के रायगढ़ में 'पोला पर्व' में बैलों की पूजा होती है। यहाँ पर मिट्टी के गाय, बैल, बच्चों के बर्तन व खिलौने आदि बनते हैं व पर्व में बिकते है। पोटियाडीह व कुम्हारपारा में 'उक्ती पर्व' के अवसर पर मिट्टी के गुड्डा–गुड़िया बिकते हैं। माना जाता है कि जिस घर में विवाह न हो रहा हो, वहाँ इन गुड़िया–गुड्डा का विवाह अक्षय तृतीया में किया जाय तो विवाह हो जाता है।

बिहार के मिथिलांचल क्षेत्र में कागज–लुगदी से स्थानीय लोक जीवन से सम्बन्धित खिलौने बनाये जाने की परम्परा है। इन खिलौने के रंगांकन में मिथिला चित्रों का प्रभाव दर्शित होता है। बिहार में खिलौना बनाने का प्राचीन इतिहास है, यहाँ पर मौर्य काल के खिलौनों के अवशेष प्राप्त हुए है। यहाँ पर खिलौनों में समृद्धता है। खिलौने यहाँ पर तीज–त्यौहारों में लोक प्रचलित हैं, भिन्न–भिन्न त्यौहार में अलग–अलग प्रकार के ये बनाये जाते हैं। 'श्यामा चक' त्यौहार में यहाँ कथानुरूप आकृतियाँ बनाई जाती है, विशेष रूप से राधा–कृष्ण की आकृति। यहाँ पर त्यौहार में पूजे जाने वाले खिलौनों की आकृति के अतिरिक्त अन्य सजाने एवं खेलने वाले व शादी में प्रयोग किये जाने वाले मिट्टी के खिलौने भी बनाये जाते है। यहाँ के खिलौनों में सजावटीपन दृष्टिगोचर होता है। यहाँ खिलौनों के विषय हाथी सवार, शेर, सुग्गा, चिड़िया, हाथी, नृत्याकृति, मूँछ वाला आदमी, घोड़ा सवार देवियाँ, कृष्ण –राधा, शिव–पार्वती, भगवान राम, गणेश–लक्ष्मी, पशु–पक्षी, कीड़े, गाड़ी, स्त्री आकृति, सेठ–सेठानी (गर्दन हिलने वाली), पंडित–पंडिताइन एवं फल वगैरह होते हैं। इनमें रंगांकन चमकदार तथा सुनहरा युक्त किया जाता है। खिलौने सर्वाधिक पटना, भागलपुर, गया, रांची, आरा, सोनपुर, मधुबनी तथा दरभंगा आदि में बनाये जाते हैं। पटना में बच्चों के मिट्टी के बर्तन प्रसिद्ध हैं।

उड़ीसा के सोनपुर, बरगढ़, सम्भरपुर में खिलौने बनाये जाने की अद्‌भुत परम्परा है। बरगढ़ में शेर, हाथी, चिड़िया, हाथी सवार एवं मिथक कथाओं से सम्बन्धित खिलौने प्रसिद्ध हैं। सम्भरपुर में घुड़सवार व पशु–पक्षी के खिलौने अधिकांश बनते हैं। यहाँ खपरैल में भी विभिन्न खिलौनों की आकृतियाँ बनायी जाती है।

दक्षिण भारत के राज्य तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल एवं आन्ध्र प्रदेश में अधिकांश रूप से देव आकृतियाँ बनाई जाती है, विशेष रूप में दशावतार की आकृति।

इन खिलौनों में स्थानीय शैली एवं स्थानीय रहन–सहन के दर्शन निहित रहते हैं। केरल में नर्तकी एवं हाथी प्रसिद्ध हैं। तमिलनाडु 'कारीगिरी' (बेल्लोर) में पशु रंगीन–चमकदार, 'पनरूति' (गुड्डालौर) में धार्मिक व ग्रामीण दृश्य एवं बनडीपालयम (एक्रोट) आदि में उच्च किस्म के खिलौने बनाये जाते है। मन्दसौर की कमर हिलाने वाली नर्तकी प्रसिद्ध है।

असम में गोलपारा क्षेत्र में उत्कृष्ट खिलौनों की रचना की जाती है। इन खिलौनों को 'हीरा' एवं 'कुमार' समुदाय के व्यक्ति बनाते है। यहाँ बनने वाले खिलौनों में असमी मुखाकृति का प्रभाव रहता है। यहाँ बनाये जाने वाले खिलौनों के विषय में माँ–बेटा, गुड़िया–गुड्डा, नृत्याकृति, पालकी सेट, देवी–देवता एवं पशु आकृतियाँ आदि होती हैं। यहाँ पर खिलौनों में ऊपर से पोशाक पहनाई जाती है। यहाँ के पशुओं की आकृति में गर्दन व पैर लम्बे बनाये जाते है। इन खिलौनों का प्रयोग धार्मिक कार्यो के लिए किया जाता है।

पॉडिचेरी के गाँव 'कोसापालयम' में मिट्टी के खिलौने बनते हैं जिन्हें 'कोसावर' व 'कूयावर' जाति के कुम्हार बनाते हैं। यहाँ पर विशेष रूप से चिड़िया, पशु व फल–सब्जी बनाये जाते हैं, साथ में धार्मिक विषयाधारित, दैनिक दिनचर्या पर आधारित जैसे–नाई, रिक्शा चालक, मजदूर, बढ़ई व शादी दृश्य आदि भी बनाये जाते हैं। मध्य प्रदेश के होशंगाबाद के मटकली स्थान का मढ़ई मेला प्रसिद्ध है। यहाँ मेला दीपावली के अगले दिन लगता है। यह मेला गोंड आदिवासियों का हैं इस मेले में मिट्टी के अनेक खिलौने बिकते है जिसमें रंग–बिरंगे तोता, बच्चों के बर्तन, गाय व बैल आदि होते हैं। उत्तराखण्ड के हरिद्वार में मेले व पर्व के अवसरों पर प्रसिद्ध बच्चों के गृहस्थी के बर्तन बिकते हैं। यह फ्लोरोसेन्ट रंग में रंगे रहते हैं, चमकदार पीले, नीले व रानी (मैजेन्टा) आदि रंगों में।

उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपद लखनऊ, कानपुर, आगरा, मथुरा, बनारस, इलाहाबाद, सीतापुर, लखीमपुर, वृन्दावन, बरेली, बुन्देलखण्ड, उन्नाव, कन्नौज, आजमगढ़, बस्ती, गोण्डा, बहराइच व फैजाबाद आदि में शैलीगत खिलौने बनाये जाने की परम्परा है। यहाँ के खिलौनों की बनावट में सरलता दिखाई देती है। यह बहुत सुन्दर तथा सजीव होते हैं। यहाँ पर दीपावली में गणेश–लक्ष्मी के पूजन का विधान है। इस अवसर पर प्रत्येक वर्ष, सभी घरों में मिट्टी के बने गणेश लक्ष्मी लाये

जाते हैं और उनकी एक वर्ष के लिए स्थापना की जाती है तत्पश्चात् आगामी दीपावली में उन्हे विसर्जित कर पुनः नयी जोड़ी स्थापित की जाती है, यह क्रम सदियों से अनवरत इसी प्रकार चला आ रहा है। यहाँ सभी जनपदों में, इस अवसर पर मोहक तथा जीवन्त विभिन्न आकार प्रकार के गणेश–लक्ष्मी तैयार किये जाते हैं। इन गणेश–लक्ष्मी पर खिलौनों की तरह रंगांकन किया जाता है। इनमें सुनहरे एवं रुपहले रंगों की प्रधानता रहती है। यहाँ भगवान कृष्ण के जन्म अवसर पर अर्थात् कृष्ण–जन्माष्टमी के अवसर पर खिलौनों द्वारा 'झाँकी' सजाने का विधान है। इस अवसर पर बहुत अधिक खिलौने बनाये जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न धर्मिक उत्सव, त्यौहारों एवं मेला आदि में मिट्टी के खिलौने अधिक संख्या में विक्रित होते हैं।

उत्तर प्रदेश के खिलौनों में बनारस के खिलौने जीवन्तता लिये हुए होते हैं। इनको देखने से प्रतीत होता है कि यह अभी बोल पड़ेगें, इनकी अलंकरण एवं साज–सज्जा देखते बनती है। इन खिलौनों की शारीरिक संरचना मान्सल युक्त, यर्थाथ प्रधान होती है। यह लघु आकार की आधार चौकी से जुड़े होते हैं जिससे इनको खड़े करने में किसी सहारे की आवश्यकता न पड़े। यहाँ के खिलौनों में सुनहरे व रूपहले रंग का प्रयोग किया जाता है। इनके विषय भगवान राम व कृष्ण के जीवन के विभिन्न प्रसंग, सामाजिक जीवन, खेल, बैन्ड–बाजा, सैनिक, पशु–पक्षी आदि होते हैं।

लखनऊ के खिलौनों में सूक्ष्मता का विशेष योग होता है। यहाँ खिलौना बनाने की परम्परा अति प्राचीन है, रामायण काल से यहाँ पर खिलौने बनाये जा रहे हैं। यहाँ पर बनाये जाने वाले खिलौनों के विषय सामाजिक जीवन के विभिन्न रूप, पौराणिक आख्यान, ऐतिहासिक गाथा, संगीतज्ञ, नृत्यांगना, महफिल, सपेरा, बैन्ड–बाजा, फल–सब्जी तथा भगवान कुबेर व गणेश–लक्ष्मी की मूर्तियाँ होती हैं। इन सभी में सुनहरे रंग का प्रयोग बहुलता से किया जाता है, जिससे इनके वैभव में वृद्धि होती है। यहाँ बनने वाले फल–सब्जी की रंगांकन एवं छटा ऐसी होती है कि यह बिल्कुल असली होने का भ्रम उत्पन करने लगते हैं।

मथुरा–वृन्दावन के खिलौने में लोकपन झलकता है। यहाँ बच्चे का रूप 'लाला' जो बैठा हुआ बच्चा होता है और चकिया–चूल्हा प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ पर पशु–पक्षी की आकृति व अन्य खिलौने भी बनते हैं।

आगरा में मिट्टी के साथ–साथ कागज–लुगदी के खिलौने बनाये जाते हैं। यहाँ के खिलौनों में प्राकृतिक रंगांकन किया जाता है। यह देखने में बिल्कुल हू–ब–हू दिखलाई देते हैं। यहाँ के खिलौनों में नर्तकी एवं पशु–पक्षी की आकृतियाँ विशेष होती हैं। यहाँ साँचे बनाने वाले मूल कलाकार भी निवास करते हैं।

बुन्देलखण्ड में खिलौने विविध धार्मिक प्रसंग में, सजीवता लिये हुए बनाये जाते हैं। इन खिलौनों पर वस्त्रांलकरण, आभूषण, साज–सामान, मुकुट एवं अस्त्र–शस्त्र आदि अलग से बनाकर लगाये जाते हैं तथा पहनाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त हाथी व दीपधारिणी यहाँ का प्रसिद्ध खिलौना है। धार्मिक खिलौने कथानुसार समूह में तैयार किये जाते हैं तथा इन्हें एक आधार चौकी से जोड़ा जाता है जिनके सहारे यह खड़े होते हैं। यहाँ खिलौनों का रंग बड़ा आकर्षक होता है।

इसी क्रम में कानपुर के खिलौने आते हैं। यहाँ के खिलौनों की शैली बिल्कुल भिन्न होती है, सदियों से यहाँ खिलौने बनाने की परम्परा जीवित है। यहाँ के कुम्हार अपनी विरासत और अपनी परम्परा के अनुसार खिलौनों को बनाते हैं, यह विभिन्न प्रकार के होते हैं। यहाँ खिलौनों का अपार भण्डार है। यहाँ मिट्टी के खिलौने सजाने तथा खेलने व धार्मिक प्रयोजन में प्रयुक्त किये जाते हैं। कानपुर के ग्रामीण क्षेत्र के खिलोनों में मोटापन एवं रंग कच्चा किया जाता है और शहरी क्षेत्रों के खिलौनों में सूक्ष्मता होती है एवं इनमें चमकदार रंग किये जाते हैं। इनके अन्य विवरण 'कानपुर के खिलौने' में दिये जा रहे हैं।

❑❑❑

6

खिलौनों बनाने की विधि

भारत में खिलौना बनाने में काली मिट्टी/चिकनी मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। इस मिट्टी को 'कचला मिट्टी' कहकर सम्बोधित किया जाता है। यह मिट्टी स्थानीय तालाबों अथवा नदी का पानी सूख जाने पर प्राप्त की जाती है। खिलौना बनाने हेतु सर्वप्रथम इसे कूटकर महीन कर लिया जाता है और पानी में रातभर/एक दिन भिगो कर, रख दिया जाता है तत्पश्चात् छन्ने (चलना) के द्वारा इसे छान कर कंकड़ रहित बना दिया जाता है तथा मोमिया अथवा जूट के बोरे में लपेटकर सुरक्षित ढक दिया जाता है। "**प्राचीन काल में खिलौने बनाने के लिए किस प्रकार मिट्टी तैयार करते थे इसके संबंध में कोई लिखित उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु शिल्प और वास्तु शास्त्रों में मिट्टी की मूर्तियाँ बनाने का उल्लेख पाया जाता है और उसके लिए मिट्टी बनाने की विधि भी दी हुई है। उपलब्ध खिलौनों के परीक्षण से ज्ञात होता है कि आज से डेढ़–दो हजार वर्ष पूर्व भी कुम्हार उसी ढंग से मिट्टी तैयार करते थे जिस ढंग से आज करते हैं और उनके बनाने का ढंग भी आजकल के समान था।**"[36] सम्पूर्ण भारत में लगभग मिट्टी बनाने की मिलती–जुलती प्रक्रिया है। मिट्टी स्थानीय स्त्रोत से पायी जाती है।

साँचे से खिलौना बनाने हेतु मिट्टी के लोईनुमा टुकड़े बना लिये जाते हैं तथा साँचे में सिलखड़ी पाउडर अथवा कण्डे की राख छिड़ककर (यह कार्य एक झिन्ने कपड़े की पोटली बनाकर किया जाता है।), मिट्टी की लोई को रखकर, अँगूठे के दबाव से सम्पूर्ण साँचे की सतह पर फैला दिया जाता है और साँचे के दूसरे भाग में भी यही प्रक्रिया अपनायी जाती है तत्पश्चात् इन दोनों भाग में पानी लगाकर, हाथ से

---

36. श्री हरिचरण लाल, मिट्टी के खिलौनों की कला का ऐतिहासिक वृत्त, सम्मलेन पत्रिका कला अंक (1987) पृ.356

दबाव देकर, आपस में जोड़ा जाता है तथा धीरे से साँचे को निकाल कर, खिलौने को सूखने के लिए रख दिया जाता है। इन्हें सुखाने हेतु सर्वप्रथम छाँव में रखते हैं, थोड़ा कड़ापन आने पर, साँचे के जुड़ने वाले स्थान पर चाकू द्वारा सफाई कर, जोड़ का सपाट यानि खत्म कर देते हैं और हाथ द्वारा चिकना कर, दोनों भागों को एक सा कर देते हैं। यह खिलौने खोखले बनते हैं। यह पकाते समय टूटे नहीं इसलिए इनसे गैस अथवा हवा निकालने के लिए, इनकी तली अथवा पीछे के भाग में छिद्र कर दिया जाता है। इस प्रकार छाँव में रख इनकी नमी को समाप्त कर, इन्हें धूप मे सुखाकर, पकाने हेतु तैयार कर लिया जाता है। यहाँ यह भी विदित हो कि इसी पद्धति के प्रयोग से ठोस खिलौने भी बनाये जाते हैं।

हाथ एवं साँचे के प्रयोग से खिलौने बनाने के लिए सर्वप्रथम साँचे द्वारा धड़ (शरीर) इसी पद्धति से तैयार कर लेते हैं तत्पश्चात् हाथों को विभिन्न प्रकार से क्रियाशील मुद्रायें बनाकर, भिन्न–भिन्न रूप तैयार कर लेते हैं। यह ठोस तथा खोखले दोनों प्रकार के बनाये जाते हैं।

खिलौनों में लोहे के पतले तार का प्रयोग आवश्यकता अनुरूप किया जाता है जैसे–मुकुट, फूल आदि को अथवा इससे स्प्रिंग बनाकर हिलती–डुलती आकृति को बनाया जाता है। आवश्यकता के अनुसार अन्य स्थान पर भी इसका प्रयोग किया जाता है।

❑❑❑

7
पकाने की विधि

खिलौनों को पकाने हेतु स्थानीय विधियाँ होती हैं। इनमें से एक विधि में ईटों की बड़ी सी भट्टी, अँगीठीनुमा बना लेते हैं और उसमें नीचे कण्डे की सतह बिछा देते हैं, उसके ऊपर खिलौने तत्पश्चात् लकड़ी के कोयले की कैरी (लकड़ी के कोयले के छोटे–छोटे टुकड़े) बिछा देते हैं पुनः खिलौनों की तह और कैरी को इसी तरह बिछा देते हैं तथा ऊपर खपरा अथवा मटकी की टूटन/टुकड़े से ढ़क देते हैं तदुपरान्त नीचे से आग जला कर इन्हें पका लेते हैं।

दूसरी विधि में आवा लगाते हैं। कच्ची ज़मीन में गड्ढ़ा खोदकर, कण्डे बिछा कर, खिलौने रख देते हैं, पुनः कण्डा व खिलौनों की सतह इसी तरह से क्रमवार रख, ऊपर से मिट्टी की लिपाई अथवा लकड़ी के चैले (चिरी हुई लकड़ी) व ऊपर से जूट के बोरे से ढ़क देते हैं। इस आवा के मध्य में हवा जाने व आग देने के लिए स्थान छोड़ते हैं या लोहे की चिमनी लगा देते हैं। आग देकर रातभर के लिए छोड़ देते हैं। खिलौने पक जाते हैं। पकने के बाद इन पर रंगांकन का कार्य किया जाता है।

❑❑❑

8

खिलौनों में रंगांकन

खिलौना बनाने व पकाने के उपरान्त इनमें रंगने का कार्य किया जाता है। इन खिलौनों पर अच्छी प्रकार से रंगांकन कार्य हो, इस हेतु इन पर सर्वप्रथम अस्तर किया जाता है। अस्तर करने से इन पर रंगों का प्रभाव चमक वाला एवं इन्हें मजबूती प्रदान करने वाला हो जाता है और इनको सुरक्षा प्रदान करता है तथा रंग फैलते नहीं हैं। अस्तर एक प्रकार का बन्धक होता है जिससे खिलौनों में रंगकण भलीभाँति प्रकार से चिपक जाते हैं। अस्तर के घोल की प्रायः दो से तीन सतह/परत की जाती हैं।

खिलौनों में अस्तर लाल–खड़िया एवं ढ़ाक के गोंद का घोल बनाकर किया जाता है। इस घोल को बनाने की प्रक्रिया श्रम प्रधान है। सर्वप्रथम खड़िया को कूट कर पीसते हैं और उसमें दसवें भाग के बराबर गोंद डालकर, पुनः कूटते हैं तत्पश्चात् इसको सानकर, माड़कर, गूँथते हैं तथा इसकी लोई बनाकर रातभर रख देते हैं, सुबह हथौड़ी से इस लोई को दो से ढाई घण्टे तक कूटते हैं। कूटते–कूटते इसमें चिकनापन आ जाता है, फिर इसमें पानी डालकर घोल तैयार करते हैं। वर्तमान में बहुत से अस्तर–घोल बाजार में तैयार मिलते हैं, जिनका प्रयोग अब कुम्भकार करने लगे हैं। इस प्रकार से तैयार अस्तर–घोल से खिलौनों की सतह में परत चढ़ाई जाती है और तदुपरान्त रंग किये जाते हैं।

खिलौनों में किये जाने वाले रंग विशेष होते हैं। यह चमक प्रदान करने वाले, मनमोहक व मन को आकर्षित करने वाले होते हैं। यह खिलौनों के रंग डेले रूप में 'अहमदावादी' तथा पाउडर रूप में 'प्लाका' नाम से बाज़ार में उपलब्ध मिलते हैं। इन रंगों को कुम्हार रंगने के लिए तैयार करते हैं, रंग तैयार करने हेतु इन्हें गोंद घोल में रात भर भिगोते (फुलाते) हैं। तत्पश्चात् इसे भलीभाँति मसलते (मिलाते) है और छानकर, काँच की शीशी में भर लेते हैं। यदि रंगों में विशेष चमक दिखानी हो, तब 'सीप–घोल' को इन रंगों में मिला लेते हैं। सीप–घोल को तैयार करने हेतु, सीप चूर्ण

को गोंद में पानी के साथ मिलाकर घोल तैयार कर लेते हैं। वर्तमान में कुछ कुम्भकार रंगों का घोल तैयार करने में गोंद के स्थान में 'व्हाइट एडहेसिव' अर्थात 'फेवीकोल' का प्रयोग करते हैं। काले रंग में सावधानी अपेक्षित है, यह दानेदार ही उपयुक्त होता है, उसी का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार से रंगों को तैयार कर, खिलौनों में परम्परागत अथवा कल्पनानुसार रंग किया जाता है। कुम्भकार खिलौनों को रंगने में वर्ण–सामंजस्य का विशेष ध्यान रखते हैं।

खिलौनों में रंगों का आकर्षण एवं भव्यता प्रदान करने हेतु सुनहरे व रुपहले रंग का प्रयोग आवश्यक है, कुम्हार इन्हें यथास्थान पर अवश्य करते हैं। इन रंगों को तैयार करने की विधि में सर्वप्रथम, रंग व गोंद का पेस्ट तैयार करते हैं तत्पश्चात् आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर, इन रंगों को तैयार कर, इनका प्रयोग करते हैं। इनको रंगने हेतु मुलायम बालों वाले ब्रश का प्रयोग किया जाता है। एक बाल के ब्रश द्वारा आँख, नाक, मुँह, भौं, पलके, तिलक आदि बनाई जाती हैं।

खिलौनों में सजावट व आलेखन स्थानीय शैलीगत विशेषता को दर्शाती है। यह सजावट श्वेत रंग के आलेखन बनाकर की जाती है। श्वेत रंग करने हेतु परम्परागत 'सफेदा' का प्रयोग होता है परन्तु अब 'एक्रेलिक' रंग द्वारा, यह कार्य किया जाने लगा है।

यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि खिलौना बनाने की प्राथमिक अवस्था से खिलौना पकाने तक का, सभी कार्य पुरुष कुम्हारों द्वारा किया जाता है और इन्हें रंगने का कार्य घर की स्त्रियों एवं बच्चों द्वारा किया जाता है। यहाँ खिलौना रंगने का कार्य सामूहिक प्रक्रिया स्वरूप होते हैं। पुरुष सदस्य भी रंगने में हाथ बटाते हैं। इन खिलौनों का वर्ण–सामंजस्य एवं वर्ण – विरोधी रंग योजना अद्भुत होती है।

भारत में समयाभाव तथा समय परिवर्तन का असर खिलौनों की रंगांकन पद्धति में देखने को प्राप्त होता है। अब कुम्भकार बाजार में उपलब्ध तैयार रंगों का प्रयोग करने लगे हैं जिससे इन रंगों की मौलिकता समाप्त होने लगी है। यह खिलौने उतने आकर्षक दिखायी नही देते लेकिन कुछ कुम्भकार आज भी रंगांकन में अग्रभाग में भली–भाँति प्रकार से सूक्ष्म रंग भरते हैं, चित्रकारी द्वारा सजाते है परन्तु पृष्ठ भाग यानि शरीर के पिछले भाग में रंगों की एक सतह सी लगा देते हैं पशु–पक्षी एवं देवताओं की मूर्तियों में सम्पूर्ण सतह पर अच्छे से रंग भरते हैं। खिलौनों में रंगों की परिकल्पना अद्भुत तथा आकर्षक होती है।

9

विपणन

कुम्हार खिलौना बनाने के पश्चात् सुरक्षित तरीके से इन्हें त्योहारी बाज़ार में ले जाकर विक्रित करते हैं। यह खिलौनों को बाज़ार में फुटपाथ, दुकान से लेकर, मेलों की जमीन में सजाकर बेचते हैं। कुम्हार इन खिलौनों के लिए मिट्टी लाने से लेकर, मिट्टी बनाने, खिलौना बनाने, सुखाने, पकाने, रंगने एवं बेचने तक का सारा कार्य स्वयं एवं परिवारजन के साथ मिलकर करते हैं। कुछ कुम्हार अधिक मात्रा में खिलौनों का निर्माण करते हैं और घर से त्योहारी बाज़ार के छोटे–छोटे व्यापारियों को विक्रित करते हैं, ये व्यापारी इन्हें स्वयं बाजारों में बेचते हैं। इस प्रकार से इस व्यवसाय में कुम्हारों का सम्पूर्ण कार्य परिश्रम युक्त है। यह विभिन्न सामाजिक–पारिवारिक समस्याओं से संघर्ष करते हुए, अपनी रचनात्मकता का परिचय देते हुए, समाज के लिए अपना योगदान देते हैं और अपनी आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति करते हैं।

❑❑❑

10

कानपुर के खिलौने

उत्तर प्रदेश का कानपुर जनपद एक महानगर है जो औद्योगिक नगरी व एशिया का मैनचेस्टर के नाम से सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। कभी यह कपड़ा एवं चर्म उद्योग का केन्द्र हुआ करता था परन्तु अब चर्म उद्योग ही यहाँ की पहचान है। यह नगर पावन गंगा के तट पर बसा है। इस नगर के अन्तर्गत 600 गाँव आते हैं। यह शहर धार्मिक, पौराणिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है। धार्मिक एवं पौराणिक दृष्टि से यहाँ ब्रह्मावर्त (बिठूर) की अनेक किवदंती है कहा जाता है कि भक्त ध्रुव के पिता उत्तानपाद की राजधानी बिठूर थी और ध्रुव जी ने यहाँ तपस्या की थी। वह स्थान जहाँ भक्त ध्रुव ने तपस्या की थी वह स्थान 'ध्रुव टीला' के नाम से प्रसिद्ध है। भगवान राम के परित्याग के उपरान्त माता सीता यहाँ स्थित 'बाल्मीकि आश्रम' में रही थी तथा लवकुश को जन्म दिया था। धरती का केन्द्र बिन्दु मानी जाने वाली 'ब्रह्म कुटी' (ब्रह्म खूँटी) यही गंगा के तट पर स्थित है। ऐतिहासिक दृष्टि से अंग्रेजी हुकुमत ने इस शहर को औद्योगिक नगर का स्वरूप दिया था। अनेक मिलों की स्थापना की थी। उन्होंने सन् 1770 ई. में इसे जिला घोषित किया था।

यहाँ अनेक क्रान्तिकारियों ने जन्म लिया और अंग्रेजों को उखाड़ फेकने में अपना योगदान दिया। सन् 1857 ई. में नानाराव पेशवा पुणे से आकर बिठूर में बसे और स्वतन्त्रता के प्रथम संग्राम में अपनी भूमिका निभाई थी। इसके साथ–साथ अजीउल्ला खाँ, तात्या टोपे, रानी लक्ष्मी बाई (यहीं जन्मी थी), अजीजन बाई, मैनावती आदि अनेक महाविभूतियों ने देश की आजादी की लड़ाई यही से लड़ी थी और अंग्रेजों को उखाड़ फेकने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। कानपुर भारत के प्रमुख क्रान्तिकारी की गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र था। जिनमें चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह, बटुकेश्वर दत्त, शिव वर्मा, दुर्गा भाभी, सालिग राम शुक्ल, असफाक उल्ला खाँ आदि प्रमुख थे।

यहाँ स्थित ख्योरा टीला से पुरा प्राचीन युग ई.पू. 4600 के अनेक अवशेष प्राप्त हुए जिससे यह ज्ञात होता है कि यहाँ प्राचीन मानव का निवास था। एक जनश्रुति के अनुसार सन् 1217 ई. में राजा कान्हदेव ने कानपुर की स्थापना की थी परन्तु दूसरी जनश्रुति यह भी है कि सन् 1698 ई. में इसे सण्चेडी के राजा हिन्दू सिंह ने इसकी स्थापना की थी। यहाँ सभी धर्म एवं विभिन्न जातियों का निवास है। सब आपस में मिल जुलकर रहते हैं और यहाँ की सांस्कृतिक गतिविधियाँ, त्योहार, मेले आदि को खूब धूम–धाम से मनाते हैं। सामाजिक समरसता का सच्चा स्वरूप यहाँ देखने को प्राप्त होता है।

कानपुर के प्रजापति (कुम्हार) सम्पूर्ण नगर एवं देहात में भिन्न–भिन्न स्थानों पर निवास करते हैं। प्रमुख रूप से यह लोग लक्ष्मीपुरवा, रेलबाजार, स्वरूप नगर, बादशाहीनाका, कर्नेलगंज, नौबस्ता, स्वरूप नगर, काकादेव–रानीगंज, गोपाल नगर, नवाबगंज, केनालरोड, बिरहाना रोड, गोविन्द नगर, मछरिया (जूही), फेथफुल गंज, मूसा नगर, मंधना, बिठूर, शिवराजपुर, चौबेपुर, अकबरपुर, रनियाँ आदि में निवास करते हैं और अपने परिवार का जीविकोपार्जन अपने पैतृक व्यवसाय द्वारा करते हैं। यह समुदाय मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न पात्रों, धार्मिक कार्यो में प्रयुक्त वस्तुओं व मूर्तियों तथा बच्चों के खेलने तथा घर में सजाने हेतु खिलौनों का निर्माण मिट्टी द्वारा करते हैं। यह समुदाय बहुत मेहनतकश होता है। इनका कार्य कठिनाई भरा तथा मेहनत प्रधान है। इनके द्वारा निर्मित वस्तुओं के निर्माण से बिक्री तक यानि प्रारम्भ से अंत तक, प्रत्येक चरण में संघर्ष जुड़ा है। इन्हें अपने कार्य का मेहनतानुरूप मूल्य नहीं प्राप्त हो पाता है। संघर्षमय जीवन के पथ पर चलते हुए, यह धैर्यपूर्वक अथवा पैतृक व्यवसाय करते हुए, समाज में अपनी भूमिका का निर्वहन कर रहे है और समाज को अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

कानपुर में मिट्टी खिलौनों का प्रयोग पर्व–त्योहारों में सजाने के लिए भी किया जाता है। मुख्य रूप से ये पर्व कृष्ण–जन्माष्टमी, दीपावली एवं हरछठ पूजन है।

भाद्रपद कृष्ण षष्ठी को 'हलषष्ठी' व्रत का विधान प्रचलित है। इस दिन स्त्रियाँ अपने पुत्रों के सौभाग्य के लिए व्रत रखती है। घर के पूज्यनीय स्थल की भित्ति पर 'ऐपन' से हलषष्टी माता का लोक चित्रांकन करती है और उनकी पूजा

विधि–विधान से कर व्रत का पारायण करती है। इस पूजन में पूजन सामग्री व बहुरी (सात भुने हुए अनाज) के साथ खिलौनों को भी सजाया जाता है इसके पृष्ठभूमि में मान्यता होती है कि घर के बालक प्रसन्न, सुखी, स्वस्थ रहे और दीर्घायु को प्राप्त करें।

कृष्ण–जन्माष्टमी का पर्व भादों माह के कृष्ण पक्ष की अष्टमी में युग पुरुष श्री कृष्ण जी के जन्मोत्सव के अवसर पर धूम–धाम से मनाया जाता है। इस अवसर पर घरों तथा मंदिरों में 'झाँकी' सजाई जाती है। यह उत्सव युग–युगान्तर से भगवान श्री कृष्ण की जन्म स्मृति स्वरूप मनाया जाता है।

'झाँकी' में खिलौने, मूर्तियाँ एवं फोटो तथा रंगीन कागज व अन्य सामग्री सजाई जाती है और विभिन्न धार्मिक, पौराणिक एवं सामाजिक कथानकों की आकर्षक प्रस्तुति की जाती है। इसमें भगवान कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का वर्णन, श्री रामचन्द्र जी के जीवन के विभिन्न प्रसंग, सामाजिक जीवन के आवश्यक पहलू आदि को मिट्टी के खिलौनों के माध्यम से दिखाया जाता है तथा मिट्टी की विविध मूर्तियों को भी मंच बनाकर सजाया जाता है। 'झाँकी'में जीवन्तता प्रदान करने के लिए इसे चलती–फिरती (चलायमान) भी बनाया जाता है।

धार्मिक व पौराणिक खिलौने 'सेट' (समूह) में बनाये जाते हैं जैसे– महाभारत के विभिन्न दृश्य, द्रोणाचार्य शय्या पर, दुर्योधन व युधिष्ठर जुआ (द्यूत क्रीड़ा) खेलते हुए, चीर–हरण, चक्रव्यूह दृश्य, अर्जुन का गीता ज्ञान का उपदेश, माखन चोरी, गाय चराते हुए, वस्त्र हरण, सुदामा प्रकरण, कृष्ण–जन्म, गोवर्धन पर्वत एवं कृष्ण–राधा आदि। राम के जीवन के विविध प्रसंग में सीता हरण, अशोक वाटिका, स्वर्ण मृग, सबरी के बेर, केवट के संग नाव पर, भरत मिलाप, राम–रावण युद्ध, सुरसा एवं राम दरबार आदि। शिव जी सम्बन्धित शिव बारात, कावंड़ यात्रा आदि। सामाजिक जीवन के दृश्यों में क्रिकेट मैच, कैरम खेलते हुए, चाट की दुकान, पनघट, संगीतज्ञ, सपेरा, साधू–मण्डली, भारत–पाकिस्तान युद्ध, बैन्ड–बाजा, सर्कस, बैलगाड़ी, यातायात, स्वतन्त्रता दिवस, वीर सेनानी की गाथायें, सेठ–सेठानी, गुड़िया–गुड्डा एवं पशु–पक्षियों के खिलौने होते हैं।

'झाँकी' सजाने से पूर्व फर्श पर चौक अथवा रंगोली, रंगीन बुरादा, रवा,

खरबूज के बीच, भूसी एवं रंगीन कागज व पन्नी आदि को कालीन की भाँति बिछाकर, उस पर खिलौनों के सेट विषय अनुरूप, संयोजन के अनुसार सजाये जाते हैं। 'झाँकी' का उत्सव सात दिन तक चलता है, प्रतिदिन 'झाँकी' का स्वरूप परिवर्तित किया जाता है। 'झाँकी' देखना अपने आप में परिकल्पित दृश्यांकन का सौन्दर्य प्रेरित दृश्य होता है।

खिलौने विक्रीत करते कुम्भकार, दुकान कानपुर

'झाँकी' की परम्परा से सामाजिक समरसता का महत्व परिलक्षित होता है। 'झाँकी' पारिवारिक सदस्यों द्वारा मिलजुल कर सजाने से, पारिवारिक एकता में वृद्धि होती है, परिवार के बच्चों, नवयुवक – नवयुवतियों में सृजनात्मक प्रवृत्ति का विकास होता है और मनुष्य की धार्मिक आस्था सुदृढ़ होती है, समाज में सामन्जस्य स्थापित होता है। कुम्हारों को खिलौनों के निर्माण से आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

'दीपावली' का पर्व कार्तिक कृष्ण अमावस्या को मनाया जाता है। यह रोशनी का त्योहार है। इस दिन गणेश – लक्ष्मी की पूजन के साथ, घर और मंदिर को

सजाया जाता है। पूजा–अर्चना एवं भगवान गणेश व माता लक्ष्मी की पकी मिट्टी की मूर्ति की स्थापना वर्ष भर के लिए की जाती है और पुरानी मूर्तियों को विसर्जित कर दिया जाता है। पूजन पश्चात् दीपावली में पटाके जलाये जाते हैं।

इस दिन पूजा स्थल पर भगवान गणेश व माता लक्ष्मी की मूर्ति के साथ ग्वालिन खिलौना तथा चकिया–चूल्हा, चौघड़ा आदि को रख कर पूजन करने का विधान है। घर पर एक 'घरौंदा' अवश्य बनाया जाता है और वहाँ पर बहुत सारे खिलौने रख सजाया जाता है। इस विधान में सुख–समृद्धि, सम्पन्नता, उन्नति, वैभव व सम्पत्ति आने की अभिलाषा होती है और सौभाग्य की वृद्धि होती है।

❑❑❑

11

खिलौनों की विशेषता

मिट्टी के खिलौने लोकाकारों से युक्त सरल व सहज रूपों में बनाये जाते हैं। यह बिल्कुल जीवन्त, बोलते से प्रतीत होते हैं। इनकी भाव–सम्प्रेषणा चरित्र पर आधारित होती है। यह अभिव्यक्ति प्रधान होते हैं। इनके हाथ क्रियाशील, विभिन्न मुद्राओं में रहते हैं तथा पैर स्थिर अवस्था में बनाये जाते हैं। हाथ एवं पैर की अंगुलियाँ आपस में संयुक्त रूप से जुड़ी हुई रहती है। शरीर के अनुपात में हाथ–पैर मोटे बनाये जाते हैं। इन खिलौनों के पैर एक आधार चौकी से जुड़े रहते हैं। चौकी प्रायः गोल, चौकोर अथवा अण्डाकार होती है जिसके किनारी का रंग चटक बिलकुल अलग होता है। बैठी हुई आकृतियों में आधार चौकी आभाव रहता है, यह पैर के बल पर बैठी बनी रहती है। सिंघासन आदि भी चौकी विहीन बनाये जाते हैं। खड़ी आकृतियाँ प्रायः सीधी, आपस में पैर जुड़े हुए, चौकी पर बनाये जाते हैं। यह एकल व सामूहिक (कथा, कहानी, विषयानुकूल, पौराणिक गाथाओं के) रूप में बनाये जाते हैं।

खिलौनों की आकृतियों में आँख परवल (सब्जी) आकार की बड़ी – बड़ी खुली हुई, पुतली काली, भूरी, गोल, तीखे नैन–नख्स वाली बनायी जाती हैं। भौं धनुष की कमान की भाँति, नाक तीखी उठी हुई तथा होंठ भाव प्रधान, इकहरी रेखा द्वारा बनाये जाते हैं। बाल एवं दाढ़ी–मूँछ घनी–घनी काले रंग से बनायी जाती है। यह खिलौने आभूषण से युक्त, भारतीय परिधान पहने हुए बनाये जाते हैं। इन्हें परम्परागत वेशभूषा को पहने हुए बनाया जाता है। इनके श्रृंगार में भारत की सनातन परम्परा दृष्टिगोचर होती है। स्त्री सोलह–श्रृंगार से युक्त और पुरुष स्थानीय परम्परा से युक्त श्रृंगार किये हुए बनाये जाते हैं। चरित्र के अनुसार इनका साज–सामान, जो खिलौनों से चिपके हुए रहते है, को बनाया जाता है। आभूषण, मुकुट, प्रागल्य, सिंघासन एवं फूल आदि में सुनहरा एवं रुपहला रंग का प्रयोग किया जाता है जो खिलौनों को

आकर्षण प्रदान करता है। इन खिलौनों में लोक–अभिकल्पन आवश्यकता अनुरूप गहरे रंग की सतह पर, श्वेत रंग से किया जाता है।

सामूहिक दृश्य में बनाये जाने वाले खिलौनों की रचना प्रेरक प्रसंग अनुसार, लोक कथा, धार्मिक एवं पौराणिक कथाओं के दृश्य विशेषता रामायण व महाभारत तथा श्रीकृष्ण लीला के दृश्य, सामाजिक दृश्य, खेल दृश्य एवं यातायात के नियम आदि के अनुसार की जाती है। इनकी अभिव्यक्ति में सभी चरित्र की भावाभिव्यक्ति क्रियाशील बनायी जाती है, इन्हें दृश्यानुसार सजाने पर जीवन्तता प्रकट हो जाती है। इनमें दृश्यानुसार रंगांकन कार्य प्रभावशाली ढंग से किया जाता है। यह अधिकांश कृष्ण–जन्माष्टमी की झाँकी में सजाये जाते हैं।

इन निर्मित होने वाले सामूहिक खिलौनों का प्रारूप प्रायः 2 इंच से लेकर 7 इंच के मध्य रहता हैं। यह बहुत बड़े अथवा बहुत सूक्ष्म रूप में नहीं बनाये जाते हैं। एकल खिलौनों या मूर्तियों के आकार एक फुट तक के रहते हैं। सामूहिक दृश्य में दृश्य की आवश्यकतानुरूप विभिन्न वस्तुओं को भी बनाया जाता है जैसे– पेड़, झोपड़ी, डलिया इत्यादि। राक्षस आकृतियाँ बड़ी डरावनी, काली, बड़ी–बड़ी आँख, सींग एवं बड़े–बड़े दाँतो से युक्त बनायी जाती है।

फल, सब्जी, मिठाई एवं मेवा आदि के खिलौनों यथावत् बनाये जाते हैं। यह

फल–सब्जी, खिलौना, कानपुर

सभी मूलाकार में ही बनाये जाते हैं, केवल गोभी, मूली, गाजर एवं लौकी आदि लघु आकार में बनायी जाती है। इन सभी में रंग हू–ब–हू किये जाते हैं यदि इन्हें पास से या छू कर न देखे तो असली होने का भ्रम उत्पन्न होने लगता है। मेवा व मिठाई को एक प्लेट (तश्तरी) में सजाकर बेचा जाता है, तश्तरी भी मिट्टी की होती है।

ग्वालिन पकी मिट्टी 2006

खिलौनों मे कुम्हार अद्भुत कल्पना का प्रयोग करते है जैसे– कृष्ण जन्म के दृश्य में निर्मित जेल की सजावट व उसके ऊपर की ओर राक्षस के चेहरे की आकृति बनाना, 'अशोक वाटिका' के दृश्य में हनुमान जी को पेड़ पर तार के सहारे बैठाना अथवा कृष्ण 'चीरहरण' दृश्य में पेड़ के विभिन्न वस्त्र एवं फूल से सजाना आदि। इसी प्रकार की कल्पना यह एकल खिलौनों के प्रारूप मे भी करते हैं जैसे– दीपवाली में ग्वालिन के सिर व हाथ में दीपक जलाने हेतु दिया का निर्माण करना आदि। इनकी इस कल्पना में सौन्दर्यानुभुति का समावेश यथावत् रहता है। इस प्रकार की कल्पना से खिलौनों की सुन्दरता अधिक बढ़ जाती है।

यहाँ पशु व पक्षी के खिलौने लघु प्रारूप में बनाये जाते हैं। इन खिलौनों में पैर व पंजे यथार्थ रूप में नहीं बनाये जाते हैं यानि पैर या पंजे के बल पर कोई खिलौना खड़ा नहीं होता बल्कि यह चौकी के सहारे खड़े होते हैं। चौकी पर ही इनके पैर व पंजे की आकृति उकेर दी जाती है और उसमें घास या अन्य वस्तुएँ भी बना दी जाती है। यह बैठे हुए और खड़े हुए, दोनों प्रकार में बनाये जाते हैं। इन पशु–पक्षियों का ऊपरी भाग हू–ब–हू बनाया जाता है। इनका रंगांकन भी ज्यों का त्यों किया जाता है। पक्षियों के 'पर' फैले हुए नही अर्थात बन्द आकार में बनाये जाते हैं। 'कलगी' अलग से निकली हुई बनायी जाती है। चोंच बन्द रहती है। आँख महीन सुन्दर सी देखती हुई बनाई जाती है। पूँछ, कान व सींग अलग से उठी हुई बनाई जाती है। पालतु पशुओं के गले में माला या पट्टा आदि को डाले हुए बनाया जाता है। हाथी की आकृति में सजावट की जाती है। यह खिलौने एकल रूप में बनाये जाते हैं। एकल प्रारूप के खिलौने प्रायः बच्चों के खेलने के लिए होते हैं। यहाँ के खिलौने प्रायः साँचों के द्वारा निर्मित होते हैं। साँचों का मूल रूप हाथों द्वारा मूलाकृति बनाकर, तैयार किया जाता है। हाथ से नमूनाकृति बनाने में दक्ष है परन्तु कुछ कुम्हार उ.प्र.आगरा से साँचा बनवाकर लाते हैं।

यहाँ के मिट्टी के खिलौनों का रख–रखाव एवं इनको सहेजना, कठिन ही नहीं दुष्कर कार्य है। इन्हें सही तरह से पैकिंग कर ही, इनकी सुरक्षा की जा सकती है। खिलौनों को 'शोकेस' में सुरक्षित रखा जा सकता है अथवा डिब्बे में पैक कर के रखा जा सकता है। डिब्बे में पैक करने में विशेष सतर्कता बरतनी पड़ती है यानि डिब्बे में कागज की कतरन या पयार आदि के साथ सहूलियत से इन्हें रखा जाता है। इसके पश्चात् भी असावधानी होने पर, यदि यह टूट जाते हैं। तब इनकी मरम्मत करनी

पड़ती है। इनकी मरम्मत करना आसान कार्य है, किसी एडहेसिव अथवा सरेस, गोंद

फूलदान, पिंजरा एवं मेवा, मिट्टी खिलौना, कानपुर

द्वारा सावधानी पूर्वक जोड़ मे जोड़ मिलाकर जोड़ देते हैं और फिर से सजाकर, सुरक्षित रख देते हैं।

पूजन आदि में प्रयोग किये जाने वाली मूर्तियाँ जो खिलौनों का ही एक प्रकार है, पूजन के पश्चात् मंदिर आदि में स्थापित की जाती है तत्पश्चात् परम्परानुसार निर्धारित समय के उपरान्त जल में विसर्जित कर दी जाती है। यह प्रत्येक वर्ष अथवा माह में नई ही प्रयोग में लाई जाती है। यह खण्डित अवस्था में जोड़ी अथवा इनकी मरम्मत नहीं की जाती, इन्हें विसर्जित ही किया जाता है। यह चाहे फिर कितनी ही सुन्दर व आकर्षक ही क्यों न हो।

यहाँ पर निर्मित खिलौने सेट (सामूहिक) एवं एकल रूप में बनाये जाते हैं। इन खिलौनों की व्याख्या करना एक महत्वपूर्ण कार्य है, क्योंकि यह अनेक रूप में तथा कुम्हारों के परिवारों के अनुसार भिन्न–भिन्न शैलियों में सृजित व रचित किये जाते हैं। इसलिये यहाँ पर कुछ मुख्य–मुख्य खिलौनों की व्याख्या, इनके विवरण व विवेचना उदाहरण स्वरूप की जा रही है, जिससे यहाँ पर बनने वाले खिलौनों के विषय में सूक्ष्मता से समझा जा सके और उनकी विशेषाताओं को जाना जा सके। इन खिलौनों की यह विशेषता अन्यत्र प्रकार के खिलौनों में देखने को प्राप्त नहीं होती है।

पनघट दृश्य

कुएँ से जल भरने का दृश्य है। ग्वालिन कुएँ से पानी भर अपने घर ले जा रही है। यह सेट 17 जिसमें एक कुआँ, एक झोपड़ी, एक पेड़ एवं 14 स्त्रियाँ है जो अलग–अलग वेशभूषा में हैं। इनमें से कुछ साड़ियाँ पहने है और कुछ लहंगा–चुनरी जैसी पारम्परिक वेशभूषा मे है। इनकी मुद्रा विभिन्न प्रकार की है, कोई कुएँ से पानी भर रहा है, कोई पानी मटकी में भर रहा है और अन्य पानी लेकर घर की ओर प्रस्थान कर रही हैं। कुछ ग्वालिन सिर और कमर में मटकी ले जा रही है तथा कुछ केवल कमर में मटकी रखे हुए हैं। इन खिलौनों की भाव मुद्रा बड़ी आकर्षित करने वाली है। कुआँ ऊँचे चबूतरे पर बनाया गया है, यह गुलाबी व नारंगी रंग का है तथा इसमें नीले रंग से सजावट है और सुनहरे रंग से खम्बे के गुम्बद बने हैं। साड़ी पहले हुए ग्वालिन विभिन्न मुद्रा में है। इनकी साड़ी विभिन्न रंगों की है जिस पर नीली बिन्दियों से सजावट है। यह गोल आधार चौकी के सहारे खड़ी हैं। इसके साथ जो ग्वालिन लहंगा–चुनरी –ब्लाउज में है, वह विभिन्न रंग सामंजस्य के वस्त्र पहने हैं तथा गोल्डन रंग से इनकी किनारी बनी हुई है, इनके पैर में महावर लगी है। यह अपने पैरों के बल खड़ी बनाई गईं हैं। इनकी माप क्रमशः ग्वालिन – 10सेमी. व 12सेमी., 2झोपड़ी 10×15सेमी., पेड़ 14 सेमी. और कुआं 23×23सेमी. का है। यह खिलौने कानपुर में निर्मित है। **(चित्र 1)**

महफिल

महफिल सेट में नाच–गाना का दृश्य है। इस सेट में आठ खिलौने हैं। जिसमें 6 संगीत–वाद्य बजाते हुए, एक गायन करते हुए तथा एक नर्तकी नृत्य करते हुए हैं। गायन करते व संगीत–वाद्य बजाते हुए खिलौने पलथी मारे बैठी मुद्रा में हैं, इनमें से एक ढोलक, एक हारमोनियम, एक ढपली, एक इकतारा और दो मंजीरा बजा

रहे हैं, सभी अलग—अलग पीली, हरी, बैगनी रंग की धोती व पूरी अस्तीन का बन्डी पहले हैं, आभूषण में कड़ा व हार धारण किये हैं। इनमें से 4 साफा पहने हुए हैं और एक खुले लम्बे—लम्बे बाल रखे है, सभी की मुद्राएँ अलग—अलग प्रकार की हैं। इनकी आँखे कजरारी, लम्बी, होंठ मुस्कुराते हुए एवं हाथ व पैर के नाखून लाल रंग से दर्शाए गये हैं। गाने वाला बादामी रंग का वस्त्र, हल्के हरे रंग की धोती सर में टोपी पहने, एक हाथ कान में और एक ऊपर की ओर उठा हुआ, होंठ गाने के भाव में बने है। नर्तकी गहरे बैगनी रंग की साड़ी पहने, गुलाबी ब्लाउज जिसमें श्वेत रंग से लोक—अभिकल्पन बने हैं, आभूषण के साथ पहने है। इसके बाल खुले हुए सर पर मुकुट, हाथ व पैर में महावर लगाये हुए यह बनाई गयी है। इसके सोलह Üृंगार से युक्त रूपमती नर्तकी की सुन्दरता देखते बनती है। इसके हाथ व पैर नर्तन की मुद्रा में बने है। कजरारी आँखे, सुर्ख लाल होंठ इसके सौन्दर्य की वृद्धि कर रहे हैं। इन सभी खिलौनों में कोई भी आधार चौकी नहीं बनाई गयी है। यह सभी अत्यन्त सुन्दर खिलौने है तथा इनके रंगांकन मे भी विशेष ध्यान दिया गया है। नृत्यांगना 15 सेमी. व 7 गायक और संगीतज्ञ 9 सेमी. माप के हैं। **(चित्र 2)**

भारत-पाक युद्ध का दृश्य

शिल्पकार ने इस सेट की रचना कर, अपने देश प्रेम को दर्शाया है। यह सेट जिसमें दो बड़े—बड़े पहाड़, 2 हेलीकाप्टर, 4 तोप तथा शेष विभिन्न अवस्था में सैनिक हैं। भारतीय सैनिक हल्के हरे रंग के वस्त्र पहने हैं एवं पाकिस्तानी सैनिक गहरे हरे रंग की वेशभूषा से सुसज्जित हैं। यह सभी सिर पर हेलमेट पहन, हाथ में बन्दूक लिए हुए हैं। केवल जो सैनिक तोप के साथ खड़े हैं उनके हाथ सीधे बने हैं। दो पर्वत 17×22 सेमी माप के अर्ध— गोलाई लिये, रंग—बिरंगा, जिसमें श्वेत व आसमानी रंग का प्रयोग ज्यादा है, इस पर एक लोहे का लम्बा सा तार लगा है, जिस पर हेलीकाप्टर को लगाया गया है, तार हिलने पर हेलीकाप्टर चलायमान प्रतीत होता है। यह रुपहले रंग से रंगा है। इस सेट की 4 तोप 9×9×6 सेमी की सुनहरे रंग की है, जिस पर काले व गुलाबी रंग से पहिये बने हैं। पाकिस्तानी सैनिको की दाढ़ी बढ़ी हुई बनी है तथा भारतीय सैनिक मूँछ वाले व माथे पर तिलक लगाये हुए हैं।

सैनिक की वेशभूषा हू—ब—हू बनाई गईं हैं। इनके मुख के भाव आक्रोश व जोश से युक्त है। केवल खड़े सैनिक गोल आधार चौकी में है शेष की कोई आधार चौकी नही है। इस सेट में तोप, पहाड़ खोखले है, शेष सभी ठोस आकार के है। **(चित्र—3)**

यह युद्ध का दूसरा सेट है। इसमें मैदानी क्षेत्र में युद्ध होते दिखाया गया है। इस सेट में दोनों ओर के चार–चार सैनिक हैं जो हाथ में बन्दूक लिये हैं। इन बन्दूक से गोली निकल रही है। गोली को गोल–गोल सुनहरे रंग से बनाया गया है और एक लोहे के तार से जोड़ा गया है। सैनिक हेलमेट पहने हुये हैं। इनकी वेशभूषा गहरे व हल्के हरी रंग की है, एक में काले धब्बे तथा एक में श्वेत धब्बे बनाये गये हैं। एक सैनिक घायल अवस्था में ज़मीन पर पड़ा हुआ है। इस सेट में एक तोप भी है और तोप से एक गोला निकल रहा है जिसे सुनहरे रंग के तार से लगाया गया है। इसमें एक

27x15x23सेमी. भारत–पाक युद्ध 1996

हवाई जहाज रुपहले रंग का, मोटे तार के सहारे से उड़ता हुआ दिखाया गया है, जिसमें एक पायलट का सिर निकला हुआ बना है। एक तिरंगा इसमें लहरा रहा है जो विजयी होने का संकेत दे रहा है। यह सभी खिलौने एक हरे रंग की आधार चौकी से जड़े हुए बने है। यह सेट 11 खिलौनों का है।

चाट वाला

चाट बेचने का दृश्य हैं। गोल चबूतरे पर चाट सजी है, इस सेट में चाट बेचने वाला तथा चाट खाने वाला एक ग्राहक बना है। चबूतरा पीले रंग का है जिसमे काले,

श्वेत व गुलाबी रंग की सजावट है। इसमें तीन स्टैण्ड में चाट रखी है, एक बल्ब लगा है। चाट वाला श्वेत वस्त्र में खड़ा है, सिर पर हरे रंग का वस्त्र लपेटे है, मूँछदार व्यक्तित्व का व्यक्ति माथे पर तिलक लगाये, चाट बना रहा है। ग्राहक चमकदार नीली कमीज व श्वेत धोती पहने हुए है तथा एक हाथ में चाट का पत्ता पकड़े है और एक हाथ खाने की मुद्रा में है। यह खिलौना सेट सामाजिक जीवन के दृश्य को दर्शा रहा है। इनकी माप है चाट वाला 11सेमी., ग्राहक 12 सेमी., चाट ठेला लाल मटका सहित 19×19×19 सेमी. है। **(चित्र 4)**

साधू कीर्तन

यह सेट पाँच खिलौनों का है। इस सेट में साधू पलथी मारकर, बैठकर कीर्तन कर रहे हैं। एक साधू के पास ढोलक, एक के पास तबला, एक साधू हारमोनियम, एक ढ़पली और एक कीर्तन की पुस्तक लिये है। यह सभी जोगिया रंग के चमकदार वस्त्र पहने हैं, गले में सुनहरे रंग की माला, माथे पर तिलक तथा हाथ में कड़ा पहने हैं, सभी काली दाढ़ी–मूँछ से युक्त, बड़ी–बड़ी आँख वाले हैं। होंठ के भाव मुस्कुराकर, गाते हुए बने हैं। यह लघुआकार के खिलौने हैं। 5साधु बैठे हुए इनमें से प्रत्येक की माप 7सेमी. है। **(चित्र 5)**

शिव बारात

भगवान शिव की बारात की कथा अनोखा पौराणिक वृतांत है। कहा जाता है कि राजा दक्ष की पुत्री सती के साथ शिव जी का विवाह होना निश्चित था। भगवान शिव अपने गण, देव लोक के देवता तथा राक्षस आदि के साथ बारात ले कर प्रस्थान करते हैं। इस बारात के दृश्य को शिल्पकार कथानक अनुसार तैयार करता है। भगवान शिव नन्दी में सवार, नाग धारण किये विकराल रूप में, साथ ब्रह्मा जी आशीर्वाद मुद्रा में, चक्रधारी विष्णु जी प्रसन्न मुद्रा में, वीणाधारी नारद जी वीणा बजाते हुए, राक्षस गण बैन्ड–बाजा बजाते हुए और गण आदि नृत्य मुद्रा में हैं। राक्षस काले, बड़े–बड़े दाँत, बड़ी–बड़ी मूँछ, माथे में त्रिकुण्ड तिलक, कन्धे में श्वेत – लाल धारी का अँगोछा तथा रंग–बिरंगा स्कर्ट नुमा वस्त्र पहने दर्शाये गये हैं। गण श्वेत रंग के डरावने, रानी रंग का पंजा व पैर, आँखे काली गोल व होंठ सीधा महावरी रंग का तथा हाथ सीधे एवं उठे हुए बने हैं। देवाकृतियाँ प्रतिमा विज्ञान के विधि–विधान के अनुसार खिलौना रूप में रची गयी हैं। सभी खिलौने गोल चौकी के सहारे खड़े हैं, केवल नन्दी

अपने पैरों के बल पर खड़ा है और शिव जी आराम से उसके ऊपर विराजमान है। यह खिलौने ठोस व खोखले हैं। **(चित्र 6)**

कांवड यात्रा

8 खिलौने शिव कांवड यात्रा 1977

महाशिवरात्रि एवं सावन के माह में शिव भक्त कांवड़ लेकर यात्रा करते हैं। गंगाजल लेकर भक्त, आराध्य शिव मंदिर के लिए प्रस्थान करते हैं और पैदल, नंगे पांव सम्पूर्ण यात्रा पूरी करते हैं तथा भगवान शिव को जल अर्पित करते हैं। यह बड़ी कठिन यात्रा है। इस आध्यात्मिक धार्मिक यात्रा को, यहाँ के शिल्पकार बड़े भक्त भाव से बनाते हैं। यह सेट 8 खिलौनों का हैं जिसमे 7 कावड़ यात्री व 1 मंदिर है। यह कावड़ यात्री अण्डाकार लाल रंग की आधार चौकी में खड़े बनाये गये हैं। यह पीले रंग की धोती व वस्त्र धारण किये हैं, गले, पैर व हाथ में आभूषण, सिर में साफानुमा कपड़ा लपेटे है जिसमें 'शिव' व 'भोले' लिखा हुआ है। इन भक्त गणों में चार 'कावड़' कंधे पर रखे हैं, एक ढोलक और एक मंजीरा बजा रहा है तथा एक भक्त भगवान शिव को जल चढ़ा रहा है। 'कावड़' सुनहरी व रंग–बिरंगी है। मंदिर बहुत सुन्दर गोल

गुम्बद वाला जिसमें लाल–श्वेत धारियाँ बनी हैं। यह खिलौने बहुत सरल रूप में बने हैं। इनकी भावाभिव्यक्ति भक्तिभाव वाले हैं। यह खिलौने ठोस / खोखले हैं।

केवट कथानक

8 खिलौने केवट प्रसंग 2010

वनवास गमन के समय नदी पार करने में भगवान राम ने केवट का सहारा लिया था जिसने भगवान राम, लक्ष्मण और सीता जी को अपनी नाव में बैठा कर नदी को पार करवाया था। इस प्रकरण का खिलौना सेट सरल आकार में बनाया गया है। यह सेट ग्रामीण क्षेत्र में निर्मित है। शिल्पकार ने यह सभी खिलौनों को बाल्यकाय रूप में बनाया है। इसमें एक नाव है जो हल्के बादामी रंग की और उसमें ऊपरी सतह पर हरी, लाल व पीली पट्टियाँ है जिसे सुनहरे रंग की रेखा से बाह्य रेखाकंन में बाँटा गया है। इस नाव में श्यामवर्णी भगवान राम पीली धोती पहने बैठे हैं, साथ में गौरवर्णी लक्ष्मण भी पीली धोती धारण किये हुए है, दोनों खिलौने आभूषणो से सुसज्जित हैं हाथ में धनुष–बाण लिये हैं बाल लम्बे खुले हुए, जूड़ादार बने हुए, जिस पर सुनहरा फीता बंधा है। माता सीता गहरी गुलाबी रंग की धोती, पीला

ब्लाउज, सिर पर रुपहला मुकुट, सुनहरे आभूषण व लम्बी बिन्दी लगाये हुए, बैठी मुद्रा में हैं। केवट नंगे बदन, नीली धोती पहने हुए, गले में सुनहरी माला, हाथ में कड़ा, सिर पर गुलाबी वस्त्र बांधे हुए, दोनों हाथ में रुपहले चप्पू लिये हुए बैठा है। इन सभी खिलौनों की भावाभिव्यक्ति सहज है।

दूसरा खिलौना सेट एक साथ मूर्ति रूप में बना हुआ है। यह सेट कुल 4 खिलौनों का है। यह दूसरे प्रकार के केवट दृश्य का सेट है। इसमें राम, लक्ष्मण एवं सीता जी का खिलौना अलग से बनी तत्पश्चात् लोहे के तार द्वारा जोड़ा गया है, पृष्ठभूमि मूर्ति रूप में अर्ध अण्डाकार रूप में बनायी गयी है जिसमें अद्भुत दृश्यांकन है। ऊपर की ओर आसमान रुपहले रंग से रंगा गया है, इसके मध्य में बड़ी सी पीले रंग की सूर्य की आभा, जिसके बीच में नारंगी रंग से सूर्य किरणों के साथ बना हुआ है। आसमान में लायात्मक टैक्श्चर दिया गया है। नीचे के आधे भाग में नदी दिखाई गयी है। नदी के एक तरफ नारियल का वृक्ष तथा दूसरी तरफ पौधे हरे रंग से बनाये गये हैं। इस नदी के मध्य में हल्के कत्थई रंग की नाव बनी है, जिस पर पैर लटका कर, राम, लक्ष्मण एवं सीता जी बैठी है। केवट को इस दृश्य में नहीं दर्शाया है, इसके पीछे शिल्पकार की कल्पना क्या होगी, पता नहीं! नाव में चीनी–जपानी प्रभाव है, इसके एक सिरे में 'ड्रेगन'सा आकार दिखाया गया है जो सुनहरे रंग का है और इसकी लाल जीभ लपलपाती बनी है। नीचे की ओर एक तरफ हल्की कत्थई चट्टाने बनाई गयी है। राम, लक्ष्मण व सीता जी के खिलौने लघुआकार के बहुत सुन्दर जीवन्त बनाये गये हैं। इनकी भाव–भंगिमा में प्रसन्नता दिख रही है, केश बन्धे है और हाथ अभय मुद्रा में हैं। राम व लक्ष्मण जी के एक हाथ में धनुष दर्शाया गया है। इसे मूर्ति रूप सेट की माप 23 ऊँचाई व 22 लम्बाई है। इसकी चौड़ाई मात्र 2 सेमी है। यह पुराना सेट है। **(चित्र 7)**

सबरी के बेर

भगवान राम 14 वर्ष के वनवास के समय सबरी के आश्रम पहुँचे थे। सबरी ने उनका स्वागत किया था और खाने के लिए बेर दिये थे। कहा जाता है कि भगवान राम को मीठे बेर खाने को प्राप्त हो इसलिए व चुपके से बेर चख लेती थी जो मीठा बेर होता, वही भगवान राम को देती। इस कथानक का दृश्यांकन शिल्पकार ने बड़े भली–भाँति प्रकार से किया है। इस खिलौना सेट में भगवान राम, लक्ष्मण, सबरी, बेर की डलिया, झोपड़ी एवं बेर का पेड़ बना है। भगवान राम व लक्ष्मण हल्के नारंगी रंग के वस्त्र धारण किये हैं और हाथ में धनुष धारण किये हैं तथा बैठी मुद्रा में बने हुए हैं।

बाल लम्बे – लम्बे, बंधे हुए, माथे पर तिलक लगा है। भगवान राम के हाथ में बेर है जिसे वह खा रहे हैं। लक्ष्मण जी बैठे है। सबरी सांवली रंग की है व श्वेत धोती पहने हुए जिस पर नीली किनारी है, बड़ी सी बिन्दी लगाये हुए, बैठी मुद्रा में बनी है और भगवान राम की ओर बेर बढ़ा रही है। बगल में कत्थई रंग की डलिया रखी है जिसमें बेर रखे हैं। पीछे की तरफ पीली कुटिया है। यह सभी खिलौने ठोस बने हैं। इनकी माप क्रमशः भगवान राम 10 सेमी, लक्ष्मण जी 10 सेमी, सबरी 9 सेमी, कुटिया 12×10 सेमी एवं पेड़ 18 सेमी, बेर की डलिया 2×5 सेमी. की है। इन खिलौनों का भाव मुद्रा बड़ी आकर्षक है। **(चित्र 8)**

सीता हरण

भगवान राम को 14 वर्ष के वनवास में, सीता हरण की घटना प्रचलित है। रावण अपनी बहन सुर्पनखा की नाक काटने का बदला लेने के लिए मामा मारिच को सोने का मृग बनाकर भगवान राम के पास वन भेजता है, जिससे सीता जी आकर्षित हो, भगवान राम से उसको लाने की ज़िद करती है, भगवान राम उसका शिकार करने के लिए चले जाते हैं, लक्ष्मण जी को सीता जी की सुरक्षा के लिए छोड़ जाते हैं, उधर लक्ष्मण जी को मदद की आवाज आती है। लक्ष्मण सीता की रक्षा हेतु एक 'लक्ष्मण रेखा' कुटिया के आगे खींच कर, राम रक्षा हेतु चले जाते हैं और सीता माता से उस रेखा के बाहर न आने का संकेत कर जाते हैं। लक्ष्मण के जाने के पश्चात् रावण साधु के वेश में भिक्षा मांगने आता है और सीता माता से 'रेखा' पार कर भिक्षा देने की बात करता है, जैसे ही सीता माता भिक्षा देने के लिए 'लक्ष्मण रेखा' पार करती है, वह उनका अपहरण कर लेता है। इस कथानक को खिलौना के सेट रूप में बनाया गया है। जिसमें एक कुटिया है, एक पेड़ है, राम, लक्ष्मण, सीता और सोने का मृग बना है श्यामवर्णी रामचन्द्र जी नारंगी रंग वेशभूषा में हैं, हाथ में धनुष, बाल बड़े–बड़े जुड़ा रूप में, गले में रूद्राक्ष की माला, माथे में त्रिशूल रूप का श्वेत–लाल टीका लगा हैं। गौरवर्णी लक्ष्मण जी पीले वस्त्र में है। वेशभूषा भगवान राम वाली ही है। सीता माता हरी साड़ी, गुलाबी ब्लाउज में, सुनहरी किनारी से युक्त, माथे पर बिन्दी, एक हाथ मृग की ओर इशारा करते हुए हैं। यह सभी गोल आधार चौकी में खड़े हैं। मृग सुनहरे रंग का है। कुटिया पीली व हरी है। पेड़ पीछे खड़ा है सभी खिलौने बड़े आकर्षक हैं। ये माप में क्रमशः भगवान राम 15 सेमी, लक्ष्मण 15 सेमी, सीता 14 सेमी, कुटिया 12×10 सेमी एवं पेड़ 15 सेमी और हिरन 10 सेमी. का है। **(चित्र 9)**

अशोक वाटिका

रावण, सीता माता को उठाकर लंका आ जाता है और सीता माता को 'अशोक वाटिका' में रखता है तथा उनके ऊपर राक्षसियों का पहरा बैठा देता है। रामभक्त हनुमान जी सीता माता का पता लगाते – लगाते अशोक वाटिका पहुँच जाते हैं और अपनी पहचान बताने के लिए, भगवान राम द्वारा दी गई अँगूठी, माता को देते हैं। इस दृश्य का बड़ा अच्छा प्रस्तुतीकरण खिलौनों के द्वारा शिल्पकार ने करने का प्रयास किया है। अशोक वाटिका के जिस पेड़ के नीचे माता सीता विराजमान है उसी पेड़ के ऊपर हनुमान जी हाथ जोडने की मुद्रा में बैठे हैं। नीचे माता–सीता दो राक्षसी के मध्य बैठी हैं। सीता माता चमकदार गुलाबी साड़ी, हरा ब्लाउज, हाथ जोड़े हुए बैठी है। बाल खुले हैं, माथे पर बिन्दी तथा मांग भरी हुई है। सभी राक्षसी काली भयंकर रूप में हैं, सींग, दाँत बड़े–बड़े, स्कर्टनुमा वस्त्र पहने, बैठी मुद्रा में है, हाथ, पैर पर रखे हुए बनाई गई है। रावण दूर स्टूल में बैठा हुआ है, इसके हाथ में तलवार है, बैंगनी रंग का कुर्ता नुमा वस्त्र, नारंगी रंग की धोती पहने हुए है। रावण को मुस्कुराते हुए, दस शीश युक्त बनाया गया है। यह खिलौने सरल आकार में बने हैं। **(चित्र 10)**

श्री कृष्ण जी का गया चराना

श्री कृष्ण जी को गाय चराना पसन्द था, यह उनकी नियमित दिनचर्या में शामिल था। वह गायों को वन चराने के लिए ले जाते एवं उन्हें चरने के लिए छोड़ देते तथा खुद पेड़ पर चढ़कर, शाखा पर बैठ जाते और बंशी बजाते जिसकी मधुर ध्वनि से सम्पूर्ण वन्य् प्राणी आनन्द का अनुभव करते। इस मनमोहक छटा से परिपूर्ण दृश्य को बनाने में शिल्पकार ने अपनी भरपूर कल्पना का सहारा लिया है। इस सेट में नीलवर्णी श्री कृष्ण जी एक पेड़ पर विराजमान है। चेहरे पर मंद–मंद मुस्कुराहट का भाव, सिर पर मोरमुकुट, चमकदार हरी–नारंगी धोती तथा कन्धे पर नारंगी पटका डाले हुए है, विभिन्न आभूषण से सुसज्जित, बाल खुले हुए, चैन की वंशी बजाते हुए बनाया गया है। कत्थई रंग के पेड़ व फूल पत्ती से लदा हुआ है। यह 15 सेमी माप का है। इस पेड़ के तने व शाखा में 'टैक्श्चर' दिया गया है। इसके आस–पास अन्य पेड़ खड़े है। गाय आस–पास चरते हुए तथा बैठी अवस्था में हैं। इनकी साज–सज्जा बहुत सुन्दर है, गले में माला, माथे पर बैंगनी रंग की बिन्दियों से सजावट, सींग ऊपर की गोलाई लिए हुए आकार में, पूँछ लम्बी पीठ पर टिकी हुई बनाई गई है। यह आधार

चौकी में खड़ी हैं जिसमें बैंगनी–लाल किनारा बना हुआ है। यह सरल रूपों में बनी हैं। इस सेट में गाय खोखली और सभी खिलौने ठोस अवस्था में हैं। **(चित्र 11)**

कृष्ण जन्म दृश्य

भगवान कृष्ण का जन्म मथुरा की जेल में हुआ था। उनके जन्म होते ही, जेल के सभी रक्षक व द्वारपाल, सैनिक देव प्रभाव से निद्रा अवस्था में चले जाते हैं और जेल का दरवाजा खुल जाता है। वासुदेव जी कृष्ण जी को सूप में रख, गोकुल के लिए प्रस्थान करते हैं। घनघोर बारिश शुरू हो जाती है, जमुना जी का जल स्तर बढ़ जाता है। कृष्ण जी की बारिश से रक्षा हेतु शेषनाग जमुना जी से निकलकर, अपने फन से छाता का रूप देकर, कृष्ण जी को ढ़क लेते है। इस कथानक का सुन्दर दृश्यांकन यहाँ के कुम्हार, अपनी कल्पनानुसार करते हैं। इस खिलौना सेट में बड़ा सा जेल होता है साथ में जमुना जी होती है। जेल की माप 21×21×20 सेमी0 है। जेल की बाह्य दीवार काले रंग के ईटों से बनी दिखाई देती है, इसमें तीन सीढ़ी व चबूतरा नारंगी रंग का बनाया गया है। इस जेल के मुख्य दरवाजे में खम्भे एवं आर्च बनी हुई है। जेल का रंग गहरे गुलाबी रंग का है। इस के ऊपर काले व सुनहरे रंग से डिज़ाइन बनी हैं। जेल के ऊपरी भाग में एक मुस्कुराता हुआ हष्ट–पुष्ट

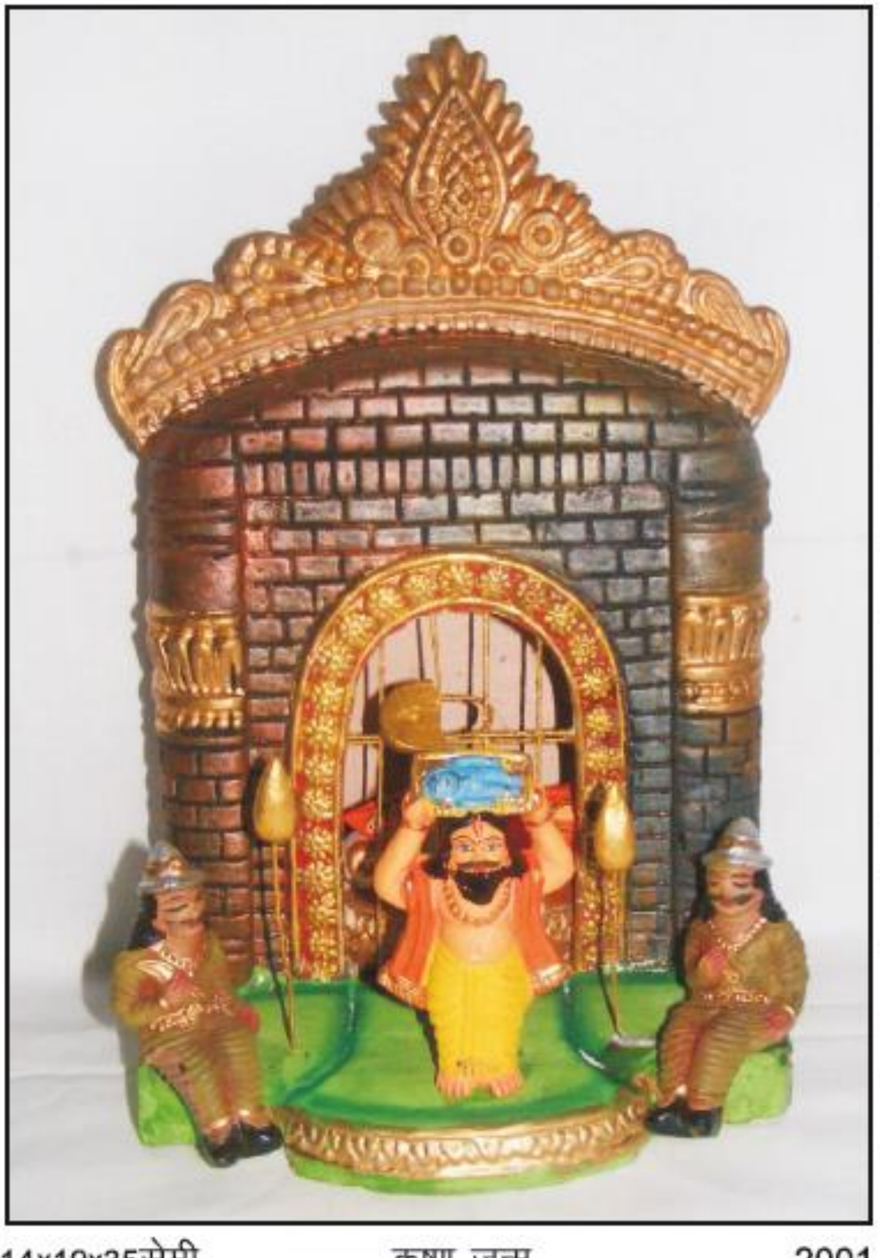

14x19x35सेमी. कृष्ण जन्म 2001

मूँछों वाला चेहरा बना है जो यह प्रदर्शित कर रहा है कि कंस के अत्याचार से भगवान कृष्ण की रक्षा कर, मुक्त कर दिया गया है। जमुना नदी को जेल से जुड़ा हुआ बनाया गया है। इसका रूप अर्द्ध–वृत्ताकार है जिसमें मिट्टी से उभारकर, लहरे बनाई गई हैं। इस नदी के बीच में शेषनाग को एक स्प्रिंग के सहारे लगाकर बनाया गया है। स्प्रिंग हिलने से शेषनाग हिलता हुआ, जीवन्त दिखाई देता है। शिल्पकार की कल्पना का यह अनोखा रूप है। नदी में वासुदेव जी को आधा डूबा हुआ दिखाया गया है। वासुदेव जी पीला सूप सिर पर रखे हैं। जिस पर कृष्ण जी को लिटाया हुआ है। वासुदेव जी के बड़े–बड़े खुले बाल, दाढ़ी व मूँछ बढ़ी हुई, माथे पर तिलक लगा है एवं आँखों में थकान के भाव, चेहरे में प्रसन्नता का भाव है यह दोनों हाथ से सूप पकड़े हुए हैं तथा नंगे बदन हैं, गले में वस्त्र का पटका डाले हैं। जेल के अन्दर देवकी जी बैठी हुई हैं, इनके चेहरे में गम्भीरता का भाव है। यह गुलाबी धोती, हरा ब्लाउज, गले में हार, सिर पर पानाकृति का मुकुट तथा माथे पर बिन्दी लगाये हुए हैं। जेल के द्वार पर दो द्वारपाल खड़े है जो बहुत डरावने हैं यह दानव रूपी हैं। यह काले रंग के, सिर पर सींग, बड़े –बड़े दाँत, लपलपाती हुई जीभ, इनके वीभत्स रूप को दर्शा रही है। इनकी वेशभूषा में लघु आकार का तिरंगा स्कर्ट, कन्धे पर लाल–श्वेत वस्त्र, माथे पर श्वेत रंग का त्रिपुण्ड के मध्य लाल टीका लगा हुआ है। यह हाथ में सुनहरे रंग की गदा पकड़े हुए हैं। इनकी ऊँचाई 13 सेमी माप की है। इस सेट में जेल खोखला है तथा अन्य सभी खिलौने ठोस बने हुए हैं। यह सेट शिल्पकार की कल्पना का अनूठा प्रयोग है। **(चित्र 12)**

यह खिलौनों का सेट अति सुन्दर है। यह एक हरे रंग की आधार चौकी में जुड़ा हुआ एक साथ बना हुआ है। इसमें जेल काले–भूरे रंग का बड़ा सा बना हुआ है। इसका शीर्ष मुकुट रूप का बना हुआ है जो सुनहरे रंग का है। सुनहरे रंग का दरवाजा और ताला, व जेल की दीवार के मध्य में अलंकृत चौड़ी पट्टी बनी हुई है जिससे इसके वैभव की वृद्धि हो रही है। यह दूसरा कृष्ण–जन्म का सेट है जो सन् 2001 में निर्मित है तथा इसकी चौड़ाई 14, लम्बाई 19 व ऊँचाई 35 सेमी. है। जेल के अन्दर देवकी माँ सोती हुई दिख रही है, इनकी मुद्रा हाथ जोड़े हुए है, जेल बन्द है। वासुदेव जी सिर पर भगवान श्री कृष्ण का सुनहरे सूप में रखे हुए, बाहर निकलते हुए दिखाई दे रहे हैं। यह नंगे बदन में है, पीली धोती तथा नारंगी उत्तरी ओढ़े हुए हैं,

दाढ़ी व बाल बढ़े हुए हैं। द्वारपाल बैठी मुद्रा में सोते हुए दिखाई दे रहे हैं और इनका भाला बगल में रखा हुआ है। यह सेट भी मूर्ति रूप में वृहदाकार बना है।

बाल कृष्ण जी झूला झूलते हुए

यह अति सुन्दर फूलों एवं पत्तियों से सुसज्जित झूला है। इसको मधुवन की तरह सजाया गया है। यह झूला उल्टा यू आकार का बना है, ऊपर शीर्ष पर दो मोर सुनहरे रंग के बैठे हुए हैं। फूल श्वेत रंग के, नारंगी रंग से किनारे व मध्य तथा बिल्कुल बीच में हल्का नीला गोला रंगा गया है। पत्तियाँ चमकदार हरे रंग की बड़ी–बड़ी बनाई गईं हैं। नीचे आधार चौकी बनी है जो सीपिया श्वेत रंग की है। इसकी किनारी नारंगी रंग से रंगी है। इसके मध्य में सीढ़ी बनी है। जिसमें कालीन की तरह गुलाबी–चौड़ी पट्टी बनाई गई है। इस पट्टी के किनारे काला रेखांकन और मध्य में दो काली रेखाएं बनाई गई है। झूले के ऊपर की ओर एक लोहे के तार का कुण्डा बनाया गया है, जिस पर डोरे के सहारे भगवान कृष्ण को आराम से उटकऊआ लेटी हुई मुद्रा में, लेटे दिखाया गया है। भगवान कृष्ण नंगे बदन, पीली चड्ढी पहने, केश बंधे हुए, झूला झूल रहे हैं। यह झूला 35×21 सेमी. और कृष्ण 5सेमी. माप का है। **(चित्र 13)**

गोबर्धन पर्वत

यह खिलौना सेट सौन्दर्यानुभूति से परिपूर्ण है। इस सेट में अद्भुत दृश्य की परिकल्पना की गयी है। शिल्पकार ने यह 16 खिलौनों का सेट, एक साथ, एक हरे रंग की आधार चौकी से जुड़ा हुआ, मूर्ति रूप में बनाया है। इसकी आधार चौकी अण्डाकार है। इस सेट की ऊँचाई 27 सेमी. है। मूर्ति रूप का यह सेट स्वयं एक 'झाँकी' का दृश्य प्रस्तुत कर रहा है। इसमें युग पुरुष भगवान श्री कृष्ण अपने विराट रूप का प्रदर्शन करते हुए बनाये गये हैं और भगवान इन्द्र के प्रकोप से गोवर्धन व नंद गाँव के वासियों की वर्षा से रक्षा करते हुए दर्शाये गय हैं। कृष्ण जी का एक हाथ गोवर्धन पर्वत उठाते हुए और एक हाथ में बांसुरी पकड़े हुए बना है। नीलवर्णी श्री कृष्ण जी नंगे बदन, पीली धोती, नारंगी उत्तरी ओढ़े, स्वर्णाभूषणों से सुसज्जित बने हैं। सिर के पीछे आभा–चक्र इनकी शोभा बढ़ा रहा है। गोवर्धन पर्वत के नीचे स्थानीय तथा नंद ग्राम्यवासियों के समूह खड़े हुए बने हैं जिनके मुखभाव डर के भाव से भयाकृंति व रक्षा के भाव से प्रसन्नचित्त मिश्रित भाव में दर्शित हैं। इसी के नीचे

तीन गाय आराम की मुद्रा में बैठी हैं। यशोदा माता को बैठी हुई अभय मुद्रा में लाल साड़ी व हरे ब्लाउज में दिखाया गया है। वह भगवान कृष्ण की इस लीला भाव को देख मन्द–मन्द मुस्कुरा रही है। यह सेट वास्तविक दृश्य सा आभास करवा रहा है। **(चित्र 14)**

माखन चोरी का दृश्य

'माखन चोर' सेट में 6 ग्वाल–बाल के साथ भगवान श्री कृष्ण, माता यशोदा और एक झोपड़ीनुमा घर है। इस सेट में ग्वाल–बाल विभिन्न मुद्राओं में खिलवाड़ करते हुए बनाये गये हैं। इनमें से 5 गौर वर्ण के तथा एक श्याम वर्ण का है, इनके बाल खुले हुए, रंगीन धोती पहने हुए, नंगे बदन बने हैं। सभी माखन खा रहे हैं। इनके हाथ मे तथा मुँह में माखन लगा है, इनमें से चार बैठे हैं, एक घोड़े की तरह उटकउआ स्थित में बैठा है, जिसकी पीठ पर श्री कृष्ण चढ़े हुए हैं और ऊँची टंगी मटकी से माखन कर खा रहे हैं व अपने ग्वाल–बाल साथियों को बाँट रहे हैं। मटकी में उभार अलंकरण से सजावट है। खड़े खिलौनों में आधार चौकी बनी है शेष में हाथ–पैर के बल बैठे हैं। खड़े खिलौने 12 सेमी व बैठे 8 सेमी माप के हैं। यह सभी आकृतियाँ सहज व सरल आकारों में हैं। नील वर्णी कृष्ण जी जनेऊ धारण किये हुए है और धोती पहने है। चेहरा मुस्कुराता हुआ, माथे पर तिलक, सिर पर मोर मुकुट, हाथ, पैर, कमर व गले में आभूषण से सुसज्जित बनाये गये हैं। इनका एक हाथ मटकी से माखन निकालते हुए तथा बाँया हाथ नीचे सखाओं को माखन देते हुए बनाया गया है। गौरवर्णी माता यशोदा को झोपड़ी से आता हुआ दिखाया गया है। माता यशोदा पारम्परिक चमकदार धोती–हरा ब्लाउज व आभूषण धारण किये हुए हैं तथा मुख के भाव में विस्मय व ममता का समन्वय दिखाई दे रहा है। इनके दोनों हाथ फैले हुए बनाये गये हैं। झोपड़ीनुमा घर नारंगी रंग से रंगी है जिसमें उभारदार गुलाबी खम्बे, जिन पर काली रेखा से किनारे बने हैं। फर्श पीले रंग की, ऊपरी भाग पीले छप्पर में कत्थई वयन दिया गया है। पूरा सेट अनुपम दिखाई दे रहा है, ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे सच में यह दृश्य सामने है। झोपड़ीनुमा घर की माप 20×17×9 सेमी है। इन खिलौनों के रंग–सामंजस्य में सादे तथा चमकदार दोनों प्रकार के वर्णो का प्रयोग किया गया है जो अद्‌भुत है। **(चित्र 15)**

कृष्ण-राधा

भगवान कृष्ण–राधा की यह जोड़ी वृहदाकार है। यह मूर्ति रूप में खोखला खिलौना है। इस प्रकार के वृहद् खिलौने अब प्रायः निर्मित होने बन्द हो गये हैं। यह मूर्तिरूप का खिलौना है। यह मंदिरों में स्थापित किये जाने वाले मूर्ति शिल्प की भाँति बना हुआ है। इस 2 खिलौनों के सेट में श्री कृष्ण जी वंशी बजाते हुए, एक पैर दूसरे पैर के ऊपर, सहारे लेकर खड़े हुए दर्शाया गया है। कृष्ण जी पीली धोती, हर कमर पटका एवं महावरी रंग की उत्तरीय ओढ़े हुए बनाये गये हैं। इन वस्त्रों को सुनहरे रंग की किनारी से सजाया गया है। कृष्ण जी के गले में बड़ी सी माला व आभूषण तथा हाथ, पैर एवं कानों में स्वर्ण आभूषण धारण किये हुए बनाया गया है। नीलवर्णी श्री कृष्ण की मुख मुद्रा प्रसन्न भाव चित्त है, माथे में तिलक, इनकी आध्यत्मिकता को बढ़ा रहा है। सिर पर बड़ा सा स्वर्ण मुकुट तथा पीछे की ओर चक्राकार आभा मण्डल भगवान कृष्ण को देवत्व के रूप में दर्शा रहा है। गौरवर्णी राधा जी प्रसन्न मुद्रा में एक हाथ में गुलाब का फूल लिये हुए, लम्बा नारंगी लहंगा, हरी चुनरी व रानी रंग का ब्लाउज पहने हुए, स्वर्ण आभूषण एवं मुकुट से सुसज्जित राधा जी के सिर के पीछे श्री कृष्ण जी की भाँति आभा–चक्र बना हुआ है। यह दोनों खिलौने भारतीय सनातन प्रेम के प्रतीक के रूप में दर्शाये गये हैं। यहाँ यह विदित है कि भगवान कृष्ण की पत्नी रुक्मणी है और राधा आध्यात्मिक प्रेम की प्रतीक है। भारत में आध्यात्मिकता का स्थान सर्वोपरि माना गया है इसलिए कृष्ण जी के साथ राधा के पूजन का विधान है। इस प्रकार की मूर्ति पूजन से घर में सुख, समृद्धि एवं प्रेम–प्रसन्नता आती है। इन खिलौनों को कत्थई अण्डाकार आधार और कमलासन में बनाया गया है जिस पर यह कृष्ण–राधा जी खड़े हुए हैं। **(चित्र 16)**

लड्डू गोपाल

यह खिलौना अद्वितीय सुन्दर मूर्ति रूप में बना है। इस खिलौने में भगवान कृष्ण जी का प्रसिद्ध बाल गोपाल रूप 'लड्डू गोपाल' बनाया गया है। यह वह रूप है जिस रूप को हिन्दू परिवारों में धातु रूप में ढालकर, घरों के मंदिरों में स्थापित कर, प्रतिदिन पूजन–अर्चना की जाती है। इस पकी मिट्टी के खिलौने में भगवान कृष्ण को घुटने के बल पर बैठे हुए, लड्डू खाते हुए दिखाया गया है। इसमें कृष्ण

जी की मुख की साज–सज्जा में लोक–अभिकल्पन बनाये गये हैं। नीलवर्णी कृष्ण जी प्रसन्न मुद्रा में है, इन्हें सिर में स्वर्ण मुकुट, कंधे तक घुंघराले केश, गले में माला व स्वर्ण आभूषण, गर्दन पर महावरी रंग का पटका, हाथ, पैर एवं कमर पर आभूषण धारण किये हुए बनाया गया है। पीले रंग की आधार चौकी जो गद्‌दे रूप में है, इसमें स्वर्ण से अलंकरण तथा काष्ठ के रंग का आधार बनाया हुआ है। एक मसनद (तकिया) भी इस पर रखा हुआ है। कृष्ण जी का आभा–चक्र पीले तथा बैंगनी रंग का सुनहरी किनारी से सुसज्जित बना है। यह खोखला खिलौना है। **(चित्र 17)**

माखन चोर का रूप

श्री कृष्ण भगवान की अनुपम लीला का एक बाल रूप 'माखन चोर' का है। यहाँ पर इस रूप के विभिन्न खिलौने बनाये जाते हैं। शिल्पकार अपनी–अपनी कल्पना अनुसार भिन्न–भिन्न रूप अलग – अलग माप के तैयार करते हैं।

इनमें से एक रूप श्रीकृष्ण जी का चौकी पर बैठकर माखन खाते हुए दर्शाया गया है। जिसमें कृष्ण जी के बगल में माखन की मटकी है जो दाहिने हाथ से पकड़े हुए है तथा बाँये हाथ में माखन है एवं वह दाहिने पैर की जांघ पर रखा है। कृष्ण जी नीलवर्णी रंग के है, उनके सिर के पीछे प्रागल्य बना है। यह खिलौना मूर्ति रूप में बना है। सुनहरे रंग के आभूषण से सुसज्जित इस खिलौने की आँख छोटी–छोटी, होंठ मुस्कुराते हुए, माथे पर लाल तिलक, बाल बड़े जूड़े से बंधे हुए बने हैं। यह खिलौना खोखला है तथा आधार चौक के ऊपर बना हुआ है। आधार चौकी का किनारा महावरी रंग से रंगा हुआ है। यह 13 सेमी ऊँचाई का खिलौना है।

श्री कृष्ण होली खेलते हुए

श्री कृष्ण का गोपियों के संग होली खेलते हुए अनुपम दृश्य है। इस सेट में अनेक गोपियाँ है जो हाथ में पिचकारी एंव ढोलक लिये हुए हैं। वृक्ष के पास भी कृष्ण जी खड़े है, पास मे सुनहरी रंग की टंकी रखी है। यह खिलौने 13 सेमी. तक की ऊँचाई के हैं। यह सभी एक अण्डाकार चौकी पर खड़े हैं। हाथ में ली गयी पिचकारी मोटे आकार की है। सभी खिलौने रंग से सराबोर हैं। इनकी वेशभूषा पारम्परिक है। ग्वालिन श्वेत साड़ी व रंगीन ब्लाउज पहने हैं, सिर पर आमाकार मुकुट है तथा सुनहरे आभूषणों से सजी–धजी बनी हैं। कृष्ण जी फ्राकनुमा वस्त्र तथा पीताम्बर धोती धारण किये हुए हैं, सिर पर मोर मुकुट जो हरे व सुनहरे रंग से बना है एवं सुनहरे आभूषण

पहने हुए आकर्षित कर रहे हैं। इन खिलौनों की भाव–भंगिमा प्रफुल्लित एवं हास–परिहास वाली है। इनका रंग सामंजस्य चटक रंगों से किया गया है जो इनके प्रभाव में वृद्धि कर रहा है। इन खिलौनों में ग्वालिन (गोपियों) के केश खुले हुए तथा श्री कृष्ण जी के केश बंधे हुए दर्शाये गये हैं, माथे पर सभी के बिन्दी व तिलक लगा है। खिलौनों की सजावट विशेष आकर्षण करने वाली है। यह सभी ठोस आकार के हैं। **(चित्र 18)**

कृष्ण सुदामा

इस 'सेट' में सुदामा जी बचपन के सखा, भगवान कृष्ण से मिलने द्वारिकापुरी जाते हैं और कृष्णजी को अपनी व्यथा बताते हैं। कृष्ण भगवान, उनको अपने सिंहासन पर बैठा कर, उनके पैर धोते हैं। यह कथा–वृतान्त दोस्ती का अनुपम उदाहरण है। इस सेट को कुम्हार ने बड़ी तन्मयता से तैयार किया है। 'सुदामा जी' के भावाभिव्यक्ति में प्रसन्नता एंव अभिभूत होने के भाव दर्शित है। इनकी आकृति 10 सेमी. की है। यह एक छोटी सी श्वेत धोती और कन्धे पर एक अंगौछानुमा वस्त्र डाले हुए हैं, इस पर किनारी नारंगी रंग की है। इनके हाथ नीचे की ओर हैं तथा हाथ में कड़े पहने हैं माथे पर श्वेत व लाल तिलक लगा है। इनकी भौं मोटी–मोटी, सफेद मूँछ, सिर मुडा हुआ एवं जनेऊ धारण किये हुए बनाया गया है। यह सब इनके गरीब ब्राह्मण रूप को अच्छे से दर्शा रहा है। सिंहासन 12 सेमी. माप का, लाल रंग से रंगा है, इसके पाये और पृष्ठ भाग पर सुनहरे रंग का प्रयोग इसकी भव्यता का प्रदर्शन कर रहा है। श्री कृष्ण घुटने के बल बैठे हुए, सुदामा जी के चरण धो रहे हैं। सिहांसन के अगल–बगल दो सेविकाएँ पंखा झल रही है। नीलवर्णी भगवान कृष्ण नारंगी रंग का वस्त्र एवं पीले रंग की धोती धारण किये हुए हैं। इनके सिर पर मुकुट हैं। सेविकाएं 11 सेमी. माप की है। यह लहंगा–चोली पहने हैं, जो गुलाबी, लाल व हरे रंग के वर्ण–सामंजस्य वाले हैं। इनकी किनारी सुनहरी है। इनके हाथ–पैर में महावर लगी हुई हैं। इन खिलौनों में आधार चौकी नहीं बनी है, ये स्वयं अपने बल पर बैठे व खड़े हैं। इन खिलौनों का सिंहासन खोखला है तथा शेष सभी ठोस बने हुए हैं। **(चित्र 19)**

वस्त्र हरण (चीर हरण)

श्री कृष्ण लीला एक अप्रियतम दृश्य चीरहरण का है, जिसमें गोपियाँ तालाब/नदी में स्नान–क्रीड़ा करने के लिए जाती हैं और अपने वस्त्र किनारे एक विशाल वृक्ष के नीचे रख देती हैं। भगवान कृष्ण चोरी से उनके वस्त्रों को वृक्ष के

ऊपर रख, वही बैठ जाते हैं और मुस्कुरातें हैं। गोपिकाएँ जब जल से बाहर आकर देखती हैं तो उनके वस्त्र गायब होते हैं, उनकी नज़र वृक्ष पर रखे वस्त्रों पर जाती है, कृष्ण जी भी दिखाई देते हैं, वह शर्माकर पुनः जल के अन्दर चली जाती है और कृष्ण भगवान से वस्त्र देने के लिए अनुनय–विनय करती हैं। इस कथा का मनोरम चित्रण, यहाँ के कुम्हार ने 'सेट' रूप में किया है। एक पेड़ है जिस पर फूल–पत्तिया बनी हैं, मध्य में वस्त्र टंगे है और बंशी बजाते कृष्ण जी एक शाखा पर बैठे है। नीचे 4 गोपियाँ जल के अन्दर खड़ी, हाथ जोड़े हुए हैं। ऊपरी भाग नग्न है, बाल खुले हुए हैं, माथे पर बिन्दी हाथ में चूड़ी, भावाभिव्यक्ति याचना व लज्जा से युक्त है। इनकी माँग भरी है जिससे प्रतीत होता है, यह सभी शादीशुदा हैं। यह गोपियाँ 7 सेमी. ऊँची हैं। नील वर्णी कृष्ण जी 6 सेमी. के है। कृष्ण जी सिर पर मोर मुकुट, हाथ में चूड़ा, पैर में कड़े, गले में हार, यह सुनहरे रंग से बने हैं। माथे पर लाल तिलक अध्यात्मिकता को दर्शा रहा है। इस सेट में 6 खिलौने हैं, जिसमें रंगो की कल्पना अद्‌भुत तथा मनभावन है। **(चित्र 20)**

यह वस्त्र हरण का दूसरा सेट है जो मूर्ति रूप में हैं। यह 7 खिलौने का सेट है। इस सेट में एक कदम का वृक्ष है जो हरे फूलों से भरा हुआ है। श्री कृष्ण भगवान उसके ऊपर छिपकर, बैठे हुए हैं। पाँच गोपिकाएं निर्वस्त्र अवस्था में जल में खड़ी हुई हैं। इस सब की भाव–अभिव्यक्ति आश्चर्य और डर से

13×23×30सेमी. वस्त्र हरण 2007

मिश्रित है। यह सब आभूषणों से सुसज्जित हैं और हाथ जोड़े हुए भगवान कृष्ण से अपने वस्त्र मांगने के लिए अनुनय–विनय कर रही है। भगवान कृष्ण आभूषण से शोभित, नारंगी धोती पहने हुए, बंशी बजा रहे हैं।

भीष्म पितामह

महाभारत के समय का दृश्य है। भीष्म पितामह घायल अवस्था में बाण–शैय्या पर लेटे हैं। भीष्म प्रतिज्ञा के परिणाम स्वरूप युद्ध की समाप्ति के पश्चात् ही अपने प्राण त्यागेगें। इनके चारों तरफ पांडव एवं श्री कृष्ण सीधी मुद्रा में खड़े हैं और वार्तालाप कर रहे हैं। इन खिलौनों में सभी सुनहरी किनारी की धोती व कुर्ता, अलग–अलग रंग का धारण किये हुए हैं, सभी के हाथ में अस्त्र–शस्त्र और सिर पर मुकुट तथा गले मे माला पड़ी है। यह खिलौने गोल आधार चौकी में बने हैं जिस पर गहरा गुलाबी रंग का किनारा बना हुआ है। अस्त्र–शस्त्र तथा भीष्म–पितामह की बाण–शय्या लोहे के तार से बनी हुई है। मुख में आँख, भौं तथा होंठ को बड़े सुन्दर ढंग से बनाया गया है। नीलवर्णी श्री कृष्ण जी को भगवान का रूप दिखाने के लिए, उनके सिर के पीछे एक आभा–मण्डल बनाया गया है। यह भी धोती–कुर्ता पहले हुए हैं। इन खिलौनों के रंग में सीपिया प्रभाव का चमकदार रंग है। भगवान कृष्ण की मुद्रा एक हाथ से आशीर्वाद देने वाली है। भीष्म पितामह श्वेत दाढ़ी मूँछ से युक्त, धोती–कुर्ता पहने, बाणों के सहारे, लेटी आवस्था में बनाये गये हैं। इन खिलौनों की माप कृष्ण 14 सेमी., युधिष्ठर 13 सेमी., भीष्म 14 सेमी., अर्जुन 14 सेमी., नकुल 14 सेमी., सहदेव 14 सेमी. है। **(चित्र 21)**

लघु प्रारूप के पशु-पक्षी के खिलौने

यहाँ पर लघु प्रारूप में मिट्टी के पशु–पक्षी के खिलौने सहज रूपों में बनाये जाते हैं। इनकी ऊँचाई 6 सेमी से 8 सेमी तक होती है। इन खिलौनों मे विशेष रूप से हाथी, घोड़ा, गधा, कुत्ता, खरगोश, गाय, बैल, ऊँट, हिरन, शेर, टाइगर, मोर, कबूतर, कौआ, बत्तख एवं विभिन्न प्रकार की चिड़ियाँ बनाई जाती हैं। इन खिलौनों का प्रयोग सजाने तथा बच्चों के खेलने के लिए किया जाता है। इन खिलौनों की विशेषता होती है कि इन पर रंग हू–ब–हू किया जाता है। इनकी

भाव–भंगिमा खिलौनों के रूपों के अनुसार प्रस्तुत की जाती है। यह बैठे हुए तथा खड़े हुए, दोनों अवस्था में बनाये जाते हैं। इनकी आधार चौकी गोल, चौकोर, अण्डाकार एवं पानाकार आदि सभी आकारों की यथानुरूप बनायी जाती है। पशु, खिलौने मोटे–लोकाकारों से युक्त, सरलता प्रधान बनाये जाते हैं। इनके पैर के पंजे, आधार चौकी से जुड़े हुए बनाये जाते हैं।

इनके प्राकृतिक सौन्दर्य को शिल्पकार रंगों द्वारा बखूबी से दर्शाते है। रंगों में कल्पना और यथार्थता का अद्भुत संगम रहता है। मनमोहक रंगों से सृजित ये खिलौने चमकदार एवं सादे रंग से अभिरंजित होते हैं। पक्षी आकर्षक, स्वाभाविक रूप में बनाये जाते हैं। विभिन्न पशु–पक्षी अपनी–अपनी विशेषता के आधार पर ही बनाये जाते हैं। इन्हें देखने से आत्मीय संतोष का अनुभव प्राप्त होता है। ऐसा लगता है कि घर–आंगन में ये अटखेलिया व कलरव कर रहे हैं।

पशु–पक्षी, खिलौना, कानपुर

एकल खिलौनों की विशेषताएँ

शेर :

यहाँ पर विभिन्न मुद्राओं के शेर बहुत पुराने समय से बनाये जा रहे हैं। बैठा हुआ शेर 13×12×7 सेमी. माप का है। पीले रंग से रंगे हुए शेर को जीभ निकाले हुए बनाया गया है। इसके चेहरे के भाव के अंकन में कुम्हार ने अपनी सृजनशीलता का परिचय दिया है। इसकी आँखे बड़ी–बड़ी गहरे रंग की, माथे पर लम्बी बिन्दी जो इसके राजा होने का अभास कराती है, दाँतों की सूक्ष्म बनावट, जीभ लपलपाती हुई, कान में लाल रंग का प्रयोग एवं इसके चेहरे का अलंकरण करने में काली बारीक रेखाओं का प्रयोग किया गया है जो कुम्हार की कलात्मकता का प्रतीक है। इसके

16 सेमी. शेर 2011

शरीर मे काले रंग से ब्रश स्ट्रोक लगाये गये हैं जो इसको अधिक सौन्दर्य प्रदान कर रहे हैं।

गाय :

गाय बड़े–बड़े सींगों से युक्त, पूँछ लम्बी, कान खड़ी अवस्था में, आँख कजरौटा युक्त, गले में काला धागा एवं माथे में गुणात्मक चिह्न इसकी शोभा को बढ़ा

रहा है। रंगों में स्वाभाविक चमकपन है। यह हल्के भूरे व श्वेत रंग की है।

हाथी :

खेलने तथा सजाने के लिए हाथी बनाये जाते हैं। 11×13×16 सेमी. का अलंकृत हाथी धूमिल श्वेत तथा काले रंग के बने होते हैं। इनकी सूँड़ गोलाई लिए हुए आगे पैर की ओर मुड़ी हुई बनाई जाती है। पैर के पास हरी–हरी घास रंगों द्वारा बनी होती है। इनकी आँखे बड़ी–बड़ी बनाई जाती है। माथे पर एवं पीठ पर नारंगी वस्त्र पड़ा हुआ जिस पर श्वेत रंग से अभिकल्पन बने हुए हैं। इनके कान पंखनुमा बड़े–बड़े, दाँत लघुकार के, पैर के खुर को काले रंग से तथा पूँछ सीधी लटकती हुई बनायी गई है।

दूसरे प्रकार का अलंकृत हाथी ऊपर की ओर सूँड़ उठाये हए है। 11×17×7 सेमी. का ग्रे रंग का हाथी सीधा स्टैण्ड पर बन घास के ऊपर खड़ा है। इसकी आँखें बड़ी–बड़ी, दाँत छोटे, पूँछ सीधी लटकती हुई, कान शरीर से चिपके हुए, मुँह खुला हुआ बना है। पीठ पर बैंगनी रंग का वस्त्र डाले हुए है जिस पर लोक–अभिकल्पन बने हुए हैं। सिर पर टोपीनुमा नारंगी सादा वस्त्र पहने हुए है। इस खिलौने की आधार चौकी अण्डाकार बनी हुई है। जिस पर लाल रंग का बार्डर बना हुआ है।

एक हाथी 8×11×5.5 सेमी. का सरल रूप में बना है, जिसकी रचना जैसे किसी बच्चे ने की हो, इसका रंग बादामी–नारंगी सा किया गया है। इसी सजावट काली रेखाओं द्वारा की गयी है। इसी सूँड आगे की ओर उठी हुई, पूँछ चिपकी हुई, कान बड़े–बड़े जुड़े हुए, दाँत सुनहरे रंग के, पीठ पर हल्के नीले रंग का वस्त्र, सिर पर पीले रंग का वस्त्र एवं गर्दन पर सुनहरे रंग का रेखांकन है। यह खिलौना सरल–सहज व मौलिक है। इस खिलौने की आधार चौकी चौकोर है जो यहाँ निर्मित होने वाले खिलौनों से भिन्न प्रकार की है।

मोर :

मोर में प्राकृतिक रंग करने का प्रयास किया गया है। इसकी भाव– भंगिमा सरल सुबोध है। चोंच लम्बी लाल रंग से युक्त, आँख बड़ी–बड़ी कजरारी जिस पर श्वेत रंग से बाह्य गोला बना है, इनके मुकुट लोहे के तार से बने है, जिन पर मिट्टी

19 सेमी. मोर 1998

से सुनहरी गोलियाँ बनी हुई लगी हैं, यह खूबसूरत 'ताज' कर एहसास कराता है। इसमें काल्पनिक सौन्दर्य भरने के लिए, पंखो को लाल रंग से रंगा गया है।

कबूतर :

श्वेत तथा सलेटी रंग का कबूतर बैठी अवस्था में बना है। इसकी चोंच मोटी, आँखे गोल व पूँछ फैली हुई, जमीन में रखी हुई बनी है। इसको प्राकृतिक सुन्दरता प्रदान करने के लिए सिर, गर्दन एवं पूँछ के किनारों पर 'कापर' रंग का 'शेड'

9 सेमी. कबूतर 1960

किया गया है। चोंच पर श्वेत रंग से दो बिन्दियाँ इसको जीवन्तता प्रदान कर रही है। इसके पीठ और गर्दन पर रेखांकन कर डिज़ाइन बनाई गईं है।

मुर्गा–मुर्गी :

चोंच बंद किये हुआ मुर्गा जिसकी लाल कलगी मुकुट की भाँति, दायें–बायें पंख लाल, हरे, पूँछ और शरीर पीला, यह रंग–बिरंगा, अद्‌भुत रंग–सामंजस्य वाला

11 सेमी. मुर्गा–मुर्गी 2011

है। इस मुर्गे की आँख बड़ी–बड़ी गोल –गोल बनी हैं। यह गोल आधार चौकी पर खड़ा हुआ, बेहद सरलाकार में बना है।

अन्य खिलौना

तमाशाः

यह सेट 5 खिलौने का है। इस सेट में 1बाँस, 3 करतब दिखाने वाले और 2 ढोल बजाने वाले हैं। ढोल बजाने वाले नगें बदन, ऊँची धोती पहने, गले में काला माला डाले हुए, दोनों हाथ से ढोल बजा रहे हैं। यह वर्गाकार नीली चौकी पर खड़े हैं।

एक बाँस मोटा सा खड़ा है जिसके शीर्ष पर एक युवक लेटा हुआ, सिर आकाश की ओर किये हुए, तार के सहारे, दोनों हाथ व पैर फैलाये हुए है। यह पंख की तरह घूमता हैं। 2 युवक बैठकर करतब दिखा रहे हैं। इन सबकी मुद्रा प्रसन्नचित्त है। सबके केश बड़े–बड़े है। यह सब नंगे बदन है और ऊँची धोती पहने हैं। यह सेट जीवन्त है। **(चित्र 22)**

जोकर :

लघु प्रारूप का यह खिलौना ठोस रूप में बना है। यह नारंगी कोट, काला पेन्ट व जूते पहने हुए है। हैट काला डिज़ाइनदार जिसमें लम्बवत् गहरी रेखाएँ बनी हैं। गले में 'बो' पहने है। इसकी आँखे गोल–गोल, भौं बड़ी –बड़ी, होंठ मोटे बड़े, कान बड़े–बड़े एवं मूँछ भी बड़ी–बड़ी बनी हुई हैं। यह बौनी आकृति के रूप में है। इसके हाथ पैन्ट की जेब में डाले हुए बने है। यह शानदार खिलौना है।

7 सेमी. जोकर 2013

सरदार व सरदारनी जी :

लघु प्रारूप में सरदार व सरदारिन का खिलौना है यह काली पैन्ट, नारंगी शर्ट के साथ में सिर पर साफा एवं पैर में जूता पहने हुए है। सरदार की मूँछे रौबदार है।

बाबा :

बैठी हुई मुद्रा में बाबा जी है। यह दोहरे साँचे से खोखले बने हुए हैं। इनके सिर पर डलिया है जिसे एक हाथ से पकड़ रखा है। बायाँ हाथ पीछे की ओर पीठ पर है। इसके काली घनी दाढ़ी व मूँछ है। माथे पर बड़ा सा तिलक लगा है। इनकी आँखे नशे से युक्त, भौं कमानदार, होंठ गम्भीर बने हुए हैं। यह लाल रंग का कुर्ता पहने हुए है जिसे काली बेल्ट से बाँध रखा है। धोती गहरी सलेटी रंग की पहने है। जिसमें काली किनारी बनी हुई है। इसके बाल काले, लम्बे घुँघराले है। यह एक पैर से घुटने के बल बैठी मुद्रा में है।

कश्मीरी युवती :

यह सौन्दर्य प्रधान खिलौना है। यह खिलौना लाल रंग की घेरदार फ्राक की तरह कुर्ती, ओढ़नी व सलवार पहने हए है जिस पर सुनहरी व काली किनारी बनी है। पैर में काली जूतियाँ पहने, यह युवती एक पत्थर के ढेर पर बैठी हुई है तथा हाथ में श्वेत रंग का भेड़ का बच्चा लिए है। इस युवती की आँखे कजरारी, माथे पर बड़ी सी बिन्दी, आभूषण में हार, कड़े, माँग टीका व कान झुमके पहने हुए है। चेहरे के भाव में प्रेमाभिव्यक्ति दिखाई देती है। यह गोल आधार चौकी पर बैठी हुई है।

14 सेमी. कश्मीरी युवती 2013

सपेरा :

बीन बजाते हुए सपेरा बहुत सुन्दर भाव प्रेषणा से युक्त खिलौना है। इसकी माप 13 सेमी. है। यह नारंगी रंग का कुर्ता, धोती, पगड़ी धारण एवं गले में बड़ी–बड़ी माला धारण किये हुए है जो सुनहरी है। इसके कान में कुण्डल, आँखे मोहक तथा होंठ बड़े एवं सुन्दर बने हुए हैं। नीचे काले रंग का सर्प बना है। इस सपेरा के बाल

13 सेमी. सपेरा 1998

बड़े–बड़े बनाये गये हैं। वस्त्रों पर सुनहरी किनारी सजी हुई है। यह श्वेत रंग की आधार चौकी पर बैठा है।

छाते वाली स्त्री :

यह ग्रामीण स्त्री हाथ में छाता लिये खड़ी है। इसकी माप 32 सेमी. लम्बी है। यह नारंगी रंग के ऊँचे आसन पर खड़ी है। इसकी वेशभूषा बंजारा वाली यानि ऊँचा घुटने तक लहंगा एवं छोटा ब्लाउज जो गहरे नारंगी रंग का है, जिन पर सुनहरे रंग से किनारी एवं डिज़ाइन बनी है। आभूषण से सुसज्जित इस स्त्री का एक हाथ कमर पर है मुख के भाव आकर्षित करने वाले हैं, आँख कजरारी, होंठ गहरे लाल, गाल में लालिमा, माथे पर लम्बी बिन्दी, सर पर जूड़ा लगा है। इस जुड़े के ऊपर से हल्के नीली रंग की ओढ़नी डाले हुए दिखाया गया है। हाथ–पैर में महावर लगा है। यह ग्रामीण स्त्री है।

सेठ–सेठानी :

यह सेठ सेठानी का जीवन्त खिलौना है जिसकी गर्दन में लोहे की स्प्रिंग लगी है, गर्दन हिलती–डुलती है। इस खिलौने में सेठ जी सिर पर घुंघराले बाल,

19 सेमी. सेठ सेठानी 1998

गुलाबी कुर्ता पहने, पीले रंग की धोती पहने खड़ी अवस्था में बने हैं। इनके गले में माला, माथे पर लम्बा तिलक यह बड़ी–बड़ी मूँछो से युक्त बनाये गये हैं। सेठानी जी भी इसी मुद्रा में खड़ी है। यह गुलाबी–नारंगी रंग की धोती – ब्लाउज पहने है इनका जूड़ा ऊपर की ओर ऊँचा सा बँधा है, माथे पर लम्बी लाल बिन्दी यह हाथ–पैर, गले, माथे पर सुनहरे रंग के आभूषण पहने हैं। दोनों खिलौनो के पेट निकले हुए है। इनकी आधार चौकी नही है, यह सीधे खड़े हैं।

ग्वालिन :

ग्वालिन यहाँ का विशिष्ट खिलौना है। यह दीपावली एवं जन्माष्टमी के अवसर पर बनाई जाती है। दीपावली में बनाई जाने वाली ग्वालिन के दोनों हाथों में चिपका हुआ दिया तथा सिर पर डलिया की भाँति रखा हुआ अथवा मटका बनाया जाता है। इसकी भाव – भंगिमा में सौम्यता प्रदर्शित होती है। यह ग्वालिन दीपावली के अवसर पर गणेश लक्ष्मी, स्थापना पूजन स्थल एवं घर के आँगन में बनाये जाने वाले 'घरौंदा' में अवश्य रखी जाती है और इसके ऊपर तथा हाथ में दिया जलाया जाता है। यह शुभता का प्रतीक है। इसकी बनावट में

20 सेमी. ग्वालिन 1999

वेशभूषा विशेष रंग–बिरंगी होती है। इसको लंहगा, चुनरी एवं ब्लाउज पहने बनाया जाता है। लंहगा–चुनरी, ब्लाउज का रंग सामंजस्य या विरोधी वर्ण का रहता है, चमकदार रंगों का प्रयोग किया जाता है जैसे–लाल के साथ हरा व बैंगनी के साथ लाल आदि। किन्हीं–किन्हीं वस्त्रों पर बिन्दी–बिन्दी से सजावट होती है, किनारी सुनहरे रंग से बनी रहती है। यह सोलह श्रृंगार से युक्त, गोल आधार चौकी पर बनाई जाती है। इससे 'गुजरिया' व 'दीप–मालिका' भी कहा जाता है।

जन्माष्टमी के अवसर पर बनाई जाने वाली ग्वालिन सिर पर हाथ से पकड़े हुए मटकी, कमर पर टिका हुई मटकी अथवा हाथ से पकड़े हुए मटकी होती है। यह 20 सेमी माप से 7 सेमी आकार तक की अलग–अलग डिज़ाइन में बनाई जाती हैं। इनकी वेशभूषा विशुद्ध भारतीय होती है। स्थानीय ग्रामीण स्त्रियाँ जो पारम्परिक वस्त्र पहनती है हु–ब–हू वही वेशभूषा इनकी होती है। चमकदार लाल–पीली– नारंगी धोती के साथ में रंग–वैपरीत्य का हरा–नीला–बैंगनी ब्लाउज किनारी सुनहरी होती है। हाथ, पैर, गले व माथे आभूषण से सुसज्जित होते हैं। बाल घने काले, कजरारे नयन, माथे पर बिन्दी, पैर में महावर, मुस्कुराते सुर्ख लाल होंठ, इनकी पहचान हैं। यह झाँकी में भगवान कृष्ण के साथ, पनघट आदि के रूप में सजाई जाती हैं।

बउआ :

बउआ खिलौना में छोटे बालक को बैठी अवस्था में, हाथ ऊपर की ओर किये हुए बनाया गया है। यह खिलौना बच्चों में अतिप्रिय है तथा बड़ों को आकर्षित करने वाला है। यह लघु आकार से वृहद आकार के बनते हैं। इसके भाव–भंगिमा में हल्की मुस्कुराहट व खुशी का भाव है। आँखे बिना काजल की सूनी –सूनी सी हैं। माथे पर लम्बी बिन्दी लगी है। हाथ–पैर की गदेली लाल रंग से रंगी है। यह हाफ लाल पैंट व काला झबला पहने हुए है। इस झबले में श्वेत रंग से लोक– अभिकल्पन बना हुआ है। इन खिलौनों में प्रत्येक बउआ का अलग–अलग रंग–सामन्जस्य होता है। मथुरा–वृन्दावन में भी इस प्रकार का खिलौने बनाये जाते हैं। वहाँ पर इसको वंश–वृद्धि व खुशियों का प्रतीक माना जाता है।

34 सेमी. बऊआ 2014

हाथी सवार :

यह खिलौना 'लिल्ली घोड़ी' की तरह बनाया जाता है। हाथी के ऊपर सवार का केवल धड़ दिखता है, शेष शरीर का भाग हाथी के अन्दर समाहित है। इसमें हाथी को लोक–अभिकल्पों से सजाया गया है। हाथी के दाँत सुनहरे व हाथी काले रंग का रंगा है। इस पर सवार आदमी हरे रंग का साफा पहने है, बड़ी–बड़ी मूँछों से युक्त, इसकी आँखे कजरारी है, माथे पर तिलक है, गले में माला है तथा इसके भाव गर्वीले है। इस व्यक्ति के पीछे दो सांकेतिक व्यक्ति बैठे बने हैं। हाथी पर हरे रंग की झूल पड़ी है। इसकी आधार चौकी अण्डाकार है। जिस पर लाल किनारा बना है। इसकी माप 10 सेमी ऊँची है।

हाथी सवार, मिट्‌टी खिलौना, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

यहाँ पर मिट्‌टी के खेलने वाले खिलौनों के रूप में कन्चे, गुट्‌टिया (गेंद–तड़ी खेल की) एवं गुट्‌टे (लड़कियों के खेलने का खेल) भी बनाये जाते थे, परन्तु अब प्रायः इन खेलों का प्रचलन बन्द होने से, इनका बनना भी बन्द हो गया है।

❑❑❑

12
निष्कर्ष

मिट्टी के खिलौना बनाने की कला तथा इसकी सामाजिक उपयोगिता का सम्बन्ध मानव की प्राचीनता से है। यह प्रत्येक युग में सांस्कृतिक एवं धार्मिक मान्यताओं के साथ–साथ सामाजिक मूल्यों का आधार रही है। यह केवल खेलने की वस्तु ही नहीं वरन् राष्ट्रीयता, धार्मिकता, अध्यात्मिकता एवं सांस्कृतिकता इनके अन्तर्मन में सदैव से व्याप्त रही है। इनकी लोकप्रियता सदा की भाँति आज भी जीवित है।

इस कला में न कोई सामाजिक बन्धन है, न ही शासकीय आरोपण और न ही इसमें यर्थाथता की बेड़ियाँ हैं। यह तो बस भारतीय लोक परम्परा का अभिन्न अंग है। यह नितांत मौलिक एवं स्वतंत्र है। खिलौना स्वस्थ मनोरंजन के साधन के साथ–साथ सरल–सहज नैसर्गिक कला बोध की प्रस्तुति है। देश एवं प्रदेश के भिन्न–भिन्न भागों में इनकी शैलीगत विशेषता अलग–अलग होने के पश्चात् भी इनके विषय, तकनीक, रंगांकन विधि तथा अभिप्राय एक ही हैं। यह प्राचीन काल से वर्तमान तक विकास के पथ पर अकृत्रिमता का भाव लिये आगे बढ़ने को तत्पर दिखाई देती है। जन–कल्याण की भावना से ओत–प्रोत इस कला का मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृति की रक्षा करना है।

भारतीय सांस्कृतिक जीवन में इसका स्वरूप इतना सशक्त है कि आधुनिकता के युग में भी यह अपना अस्तित्व बनाये हुए है। समकालीन कला के परिप्रेक्ष्य में इसका स्वरूप यथावत् है। समकालीन कलाकार इनके रूपाकारों को लेकर नवीन प्रयोग कर रहे हैं और सृजनात्मक कार्य कर रहे हैं जिससे इनकी सार्थकता को और बल प्राप्त हुआ है।

पर्यावरण की रक्षक इस कला के शिल्पकारों (कुम्हारों) की स्थिति बहुत दयनीय है। यदि वह रोजगार अथवा उदर पूर्ति के लिए इसके साथ–साथ अन्य कोई व्यवसाय (कार्य) न करे, तो भूख से मरने की नौबत आ सकती है। प्लास्टिक उत्पादों के प्रवेश व जन साधारण का लोक परम्परा में रुझान कम होने के कारण, इन कुम्हारों को बड़ा नुक़सान हुआ है। इस वजह से वह अपने बच्चों अन्य रोजगारों (पेशों) से जोड़ रहे हैं।

सरकारी तन्त्र ने भी अधिकांश स्थानों के कुम्हारों के लिए किसी प्रकार की कोई योजना का प्रचार–प्रसार नही किया है और यदि कोई योजना है, तो वह इन योजनाओं की जानकारी इन तक नहीं पहुँचा रहे हैं। इस अभाव में यह लोग लाभ से वंचित है तथा अपने पैतृक व्यवसाय को छोड़ने के लिए मजबूर है। जबकि भारत एक सांस्कृतिक केन्द्र है यहाँ शिल्पकारों के हित की अनेक योजनाएँ संचालित होती है। सबसे दुर्भाग्यपूर्ण तो यह है कि इन खिलौना बनाने वाले इन अधिकांश दक्ष कारीगारों (कुम्हारों/शिल्पकारों) के शिल्पकार परिचय–पत्र (Artisan card) अभी तक नहीं बन पाएँ हैं। इन कार्ड के अभाव में यह कारीगर अपनी निपुणता का परिचय अन्य शहरों पर नहीं पहुँचा पा रहे हैं।

यहाँ यह विदित हो कि राष्ट्रीय या प्रादेशिक हस्तशिल्प मेलों में इन कार्ड के बगैर सहभागिता की अनुमति नहीं होती, इसलिए यह अपनी कला का प्रदर्शन अन्य स्थानों पर नहीं कर पा रहे हैं। दूसरा नुक़सान यह है कि यह लोग कार्ड के अभाव में सरकारी अनुदान से वंचित है जिससे अपनी कुशलता का प्रदर्शन ठीक प्रकार से नहीं कर पा रहे हैं और अपनी परम्परागत विरासत को त्याग रहे हैं। जिन अन्य स्थानों पर इस प्रकार की योजना का लाभ शिल्पियों को प्राप्त हो रहा है, वहाँ का शिल्पी समुदाय व वहाँ की शैलीगत कला का विकास क्रमशः बढ़ता जा रहा है एवं शिल्पकारों को आर्थिक रोजगार के नये अवसरों को तलाशने की आवश्यकता नहीं पड़ रही है। वह अपने पैतृक व्यवसाय को नये–नये आयाम दे रहे हैं।

मिट्टी की इस अनुपम कला को लुप्त होने से बचाने के लिए भागीरथी प्रयास की आवश्यकता है। यह समय उपयुक्त है अथवा नही ंतो यह खिलौने

संग्रहालय की वस्तु बनकर रह जाएगें, परन्तु आपको यहाँ यह अवगत करा दें कि अभी तक सम्पूर्ण भारत में मेरे संज्ञान में कोई ऐसा संग्रहालय नहीं आया, जहाँ इनका संग्रह किया गया हो। यह दुर्भाग्यपूर्ण बात है। यदि समय रहते शासन, प्रशासन, हम और आप न सजग हुए तो यह कला अवश्य ही किवदंतियो और कहानी में सुनाई पड़ेगी।

खिलौनों को बाज़ार या मेलों आदि से खरीदा जाता है, तो यह पता नहीं चल पाता हैं कि अमुक खिलौना किस कुम्हार द्वारा बनाया गया है अथवा किस मोहल्ले या किस गाँव में यह निर्मित हुआ है। इसलिए खिलौना बनाने वाले का पता नहीं चल पाता है। बाजार या मेलों में कुम्हार स्वयं खिलौने बेंचते है और उनके रिश्तेदार आदि बनाने वाले से लेकर इन्हें बेचते हैं या दुकानदार भी इन्हें बेचता है। दुकानदार किसी धर्म व जाति का हो सकता है वह थोक में कुम्हार से खरीदकर, इनका विपणन करता है।

कुम्हारों को सीधा लाभ प्रदान करने के लिए 'एक्सपो', हस्तशिल्प मेलों, कला हाट एवं हस्तकला केन्द्र में सीधे इन्हें बेचने के अवसर दिए जाएँ। जिससे ये लोग आर्थिक रूप से सम्पन्न हो और अन्य लोग रोजगार की ओर उन्मुख न हो।

खिलौना कला को बढ़ावा मिलने से पर्यावरण की रक्षा होगी क्योंकि प्लास्टिक एवं अन्य सामग्री के खिलौनों की अपेक्षा यह मिट्टी के खिलौने पर्यावरण के अनुकूल होते हैं और प्रदूषण से मुक्त होते हैं।

प्रदेश की राजधानियों में खिलौना बनाने के केन्द्र अथवा स्कूल खोले जाएं जहाँ निपुण कुम्हार प्रशिक्षण देने का कार्य करें। इससे रोजगार के नये—नये अवसर प्राप्त होगें।

यह भारत की महत्वपूर्ण कला होने के कारण यदि सरकारी तन्त्र के माध्यम अथवा अनुदान द्वारा इन खिलौनों के संग्रहालय स्थानीय स्तर पर स्थापित किये जाए तो आने वाली भावी पीढ़ी एवं आने वाले पर्यटक इससे रू—ब—रू होते रहेगें।

दूसरा इन खिलौनों से सम्बन्धित यदि 'थीम पार्क' यानि 'खिलौना पार्क'

बनाये जाये तब भी पर्यटकों की संख्या में वृद्धि होगी । यह थीम पार्क ऐसा होना चाहिए जिसमें इनके रूप, आकार, रंग और शैलीगत विशेषता का आधार बनाकर, बड़े–बड़े आकार के खिलौनों को इस पार्क में बनाकर, झाँकी रूप में सजाया जाए, जिससे इन खिलौनों का प्रचार–प्रसार हो तथा इस पार्क में पर्यटकों को आने–जाने का एक स्थान प्राप्त हो जाए। इस कार्य के लिए कुम्हारों और विशेषज्ञ कलाकारों से सहायता ली जाए। इन दोनों योजनाओं से भारत के शहरों में 'पर्यटन' को बढ़ावा मिलेगा तथा यह लोक निधि सुरक्षित रहेगीं।

इस कला को प्रोत्साहित करने के लिए समय–समय पर स्कूल अथवा कालेज में कुशल कुम्हारों के द्वारा 'कार्यशाला' करवायी जाए एवं 'प्रशिक्षण' दिया जाए जिससे जनता के मध्य जनजागरुकता पैदा हो व इस कला के प्रति रुझान दिखाई दे। इस प्रकार कार्यक्रम से खिलौनों को पुनः जीवन मिलेगा और समाज में व्यापक परिवर्तन देखने को प्राप्त होगा। आम जन अपनी विरासत के प्रति आकृष्ट होगें।

14 सेमी. गुड़िया गोलक 1998

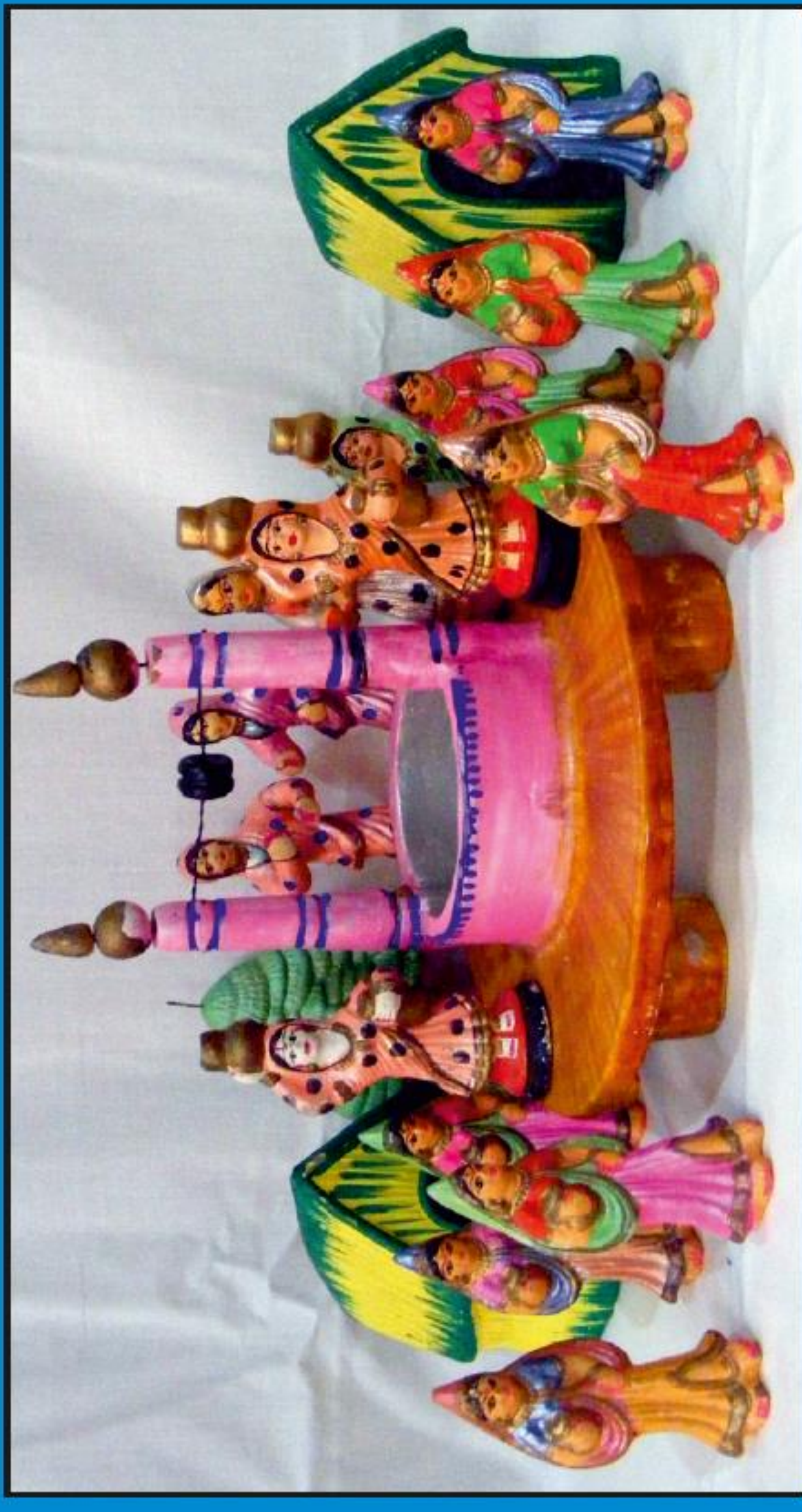

17 खिलौने (चित्र 1) पनघट 1980

8 खिलौने (चित्र 2) महफिल 1975

21 खिलौने (चित्र 3) भारत–पाक युद्ध का दृश्य 2010

3 खिलौने (चित्र 4) चाट का सेट 2008

5 खिलौने (चित्र 5) साधु कीर्तन 2007

15 खिलौने (चित्र 6) शिव बारात 2007

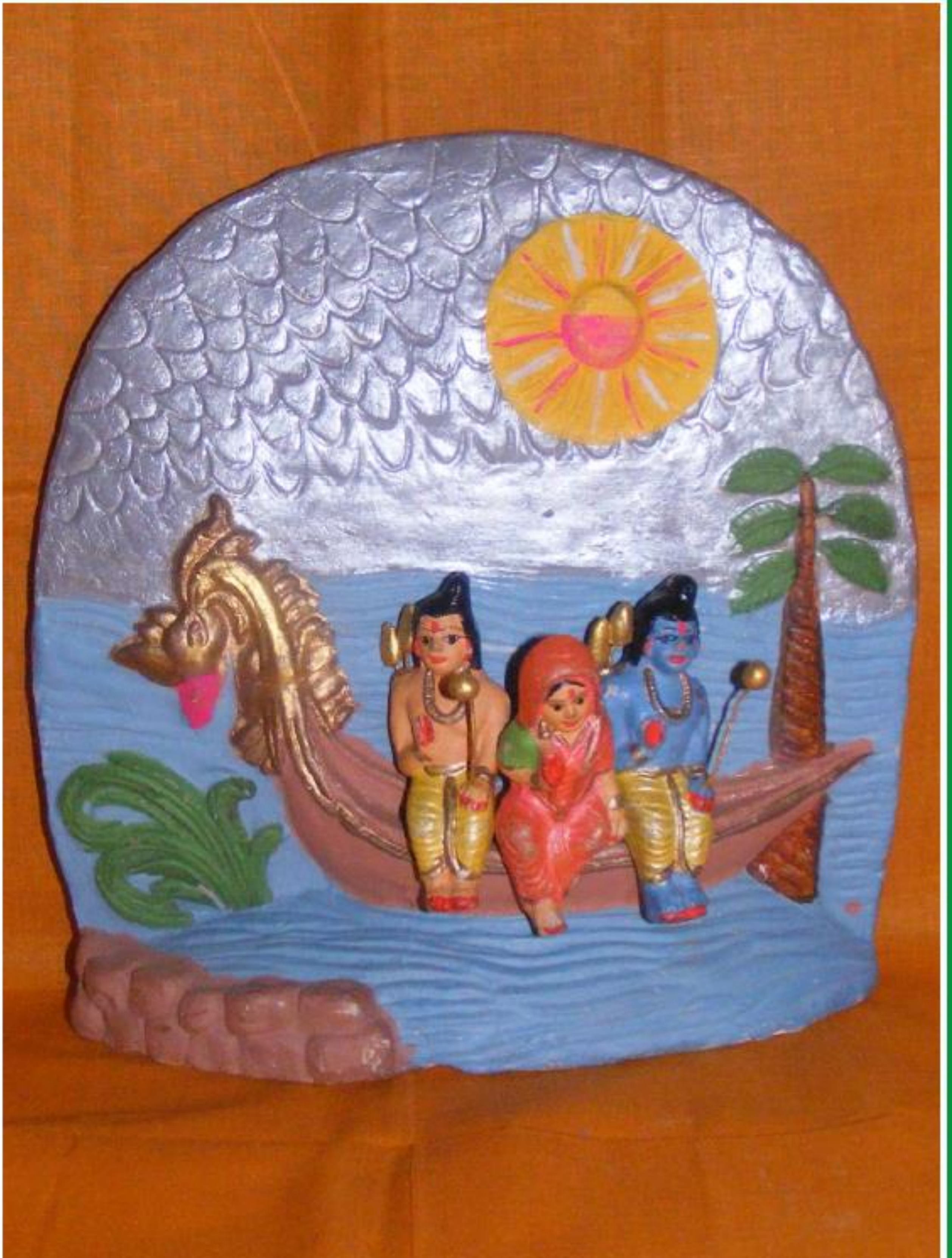

23×15×2सेमी. (चित्र 7) केवट कथानक 1981

6 खिलौने (चित्र 8) सबरी के बेर 2005

7 खिलौने (चित्र 9) सीता हरण 2005

13 खिलौने (चित्र 10) अशोक वाटिका 1998

9 खिलौने (चित्र 11) गाय चराना 2000

(चित्र 12) कृष्ण जन्म दृश्य, खिलौने पकी मिट्टी 2003

2 खिलौने (चित्र 13) बाल कृष्ण जी झूला झूलते हुए 2006

27 सेमी. (चित्र 14) गोवर्धन पर्वत 2005

8 खिलौने (चित्र 15) माखनचोरी का दृश्य 2015

44 सेमी.   (चित्र 16 राधा कृष्ण)   1998

38 सेमी. (चित्र 17) लड्डू गोपाल 1996

8 खिलौने (चित्र 18) कृष्ण–राधा होली 2008

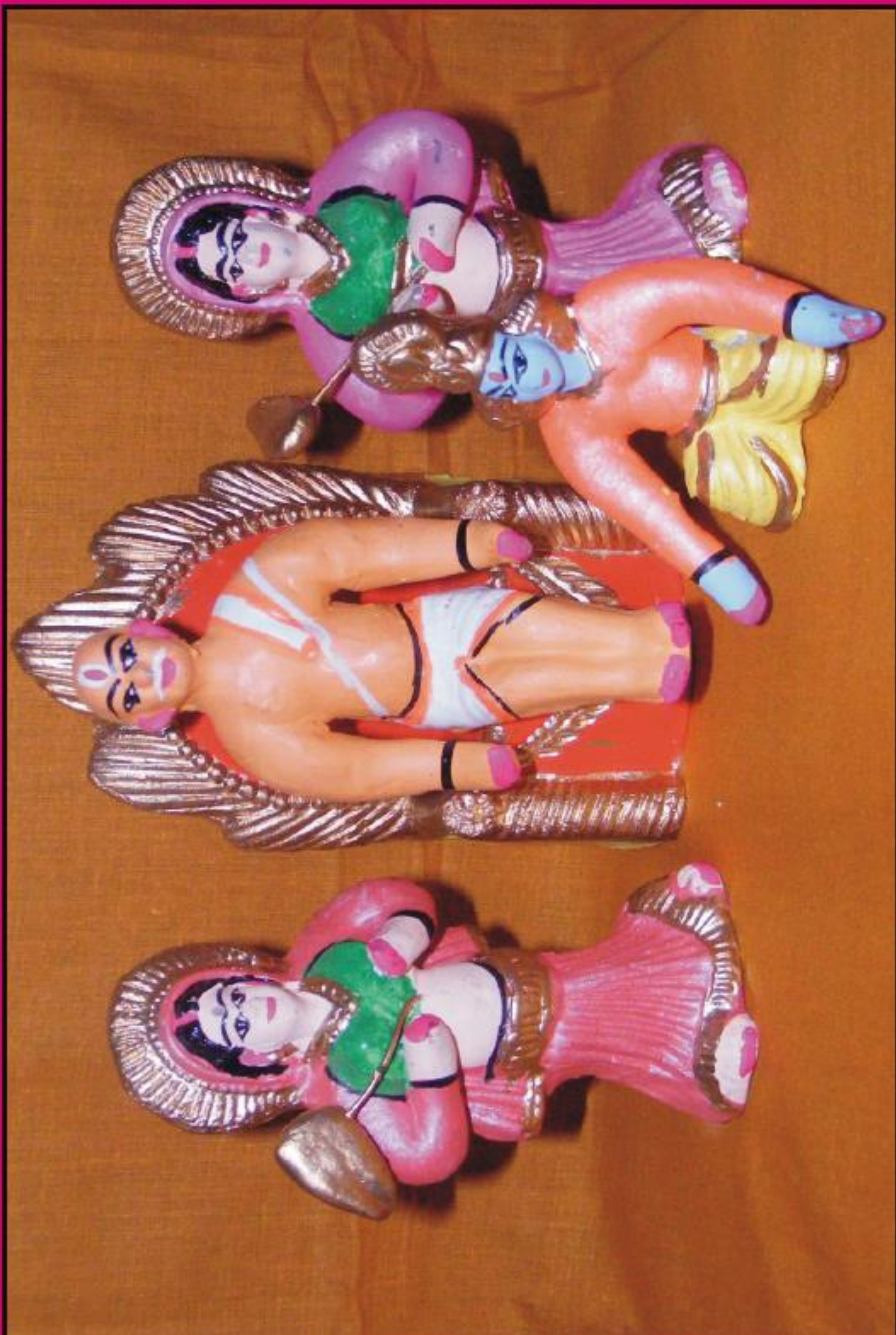

8 खिलौने (चित्र 19) कृष्ण सुदामा 2008

6 खिलौने (चित्र 20) वस्त्र हरण 2007

7 खिलौने (चित्र 21) भीष्म पितामह 1978

24, 14 व 8 सेमी. (चित्र 22) तमाशा 2018

पशु-पक्षी खिलौना

16 सेमी. शेर 2011

6 सेमी. शेर 1957

9 सेमी. शेर 2006

5 सेमी. कुत्ता 1957

7 सेमी. हंस 1987

7 सेमी. चिड़िया 1960

11 सेमी. तोता 2015

4सेमी. बत्तख 1960

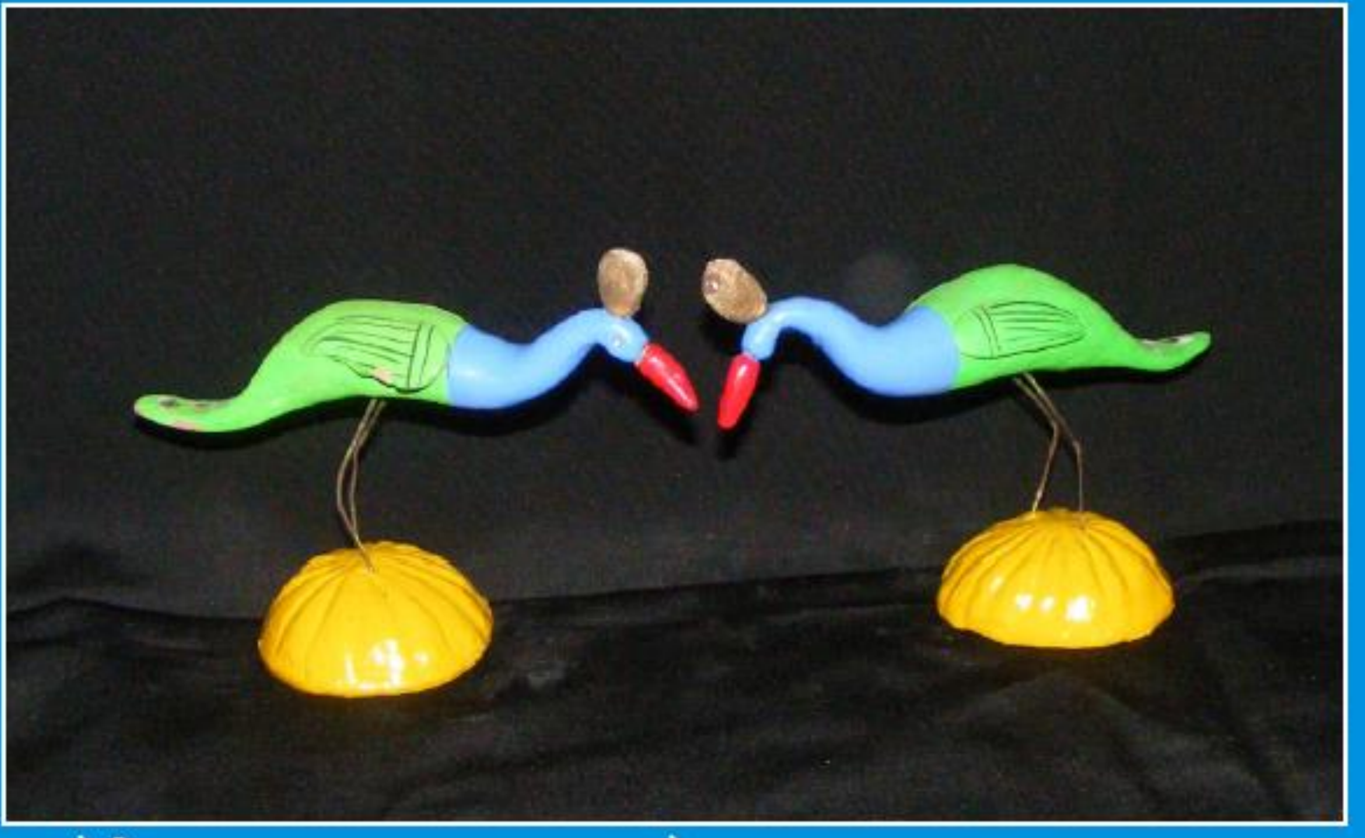

10 सेमी. मोर 1994

11 सेमी. मुर्गा–मुर्गी 2011

10 सेमी. तोता 2007

10 सेमी. फल डलिया 2012

ग्वालिन खिलौना

24 सेमी. ग्वालिन 2008

14 सेमी. ग्वालिन 2004

21 सेमी. ग्वालिन 2010

12 सेमी. ग्वालिन 2001

12 सेमी. ग्वालिन 2001

20 सेमी. ग्वालिन 2015

8 सेमी. राधा–कृष्ण 1968

13 सेमी. श्री कृष्ण जी 2003

32 सेमी. छाते वाली स्त्री 2005

14 सेमी. ग्वालिन 1986

राधा-कृष्ण खिलौना

12 सेमी. श्री कृष्ण जी 1970

14 सेमी. राधा—कृष्ण 1978

18 सेमी. श्री कृष्ण जी 2005

9 सेमी. गुड़िया 1986

18 सेमी. पक्षी (आगरा) 2010

15 सेमी. भिश्ती (लखनऊ) 1925

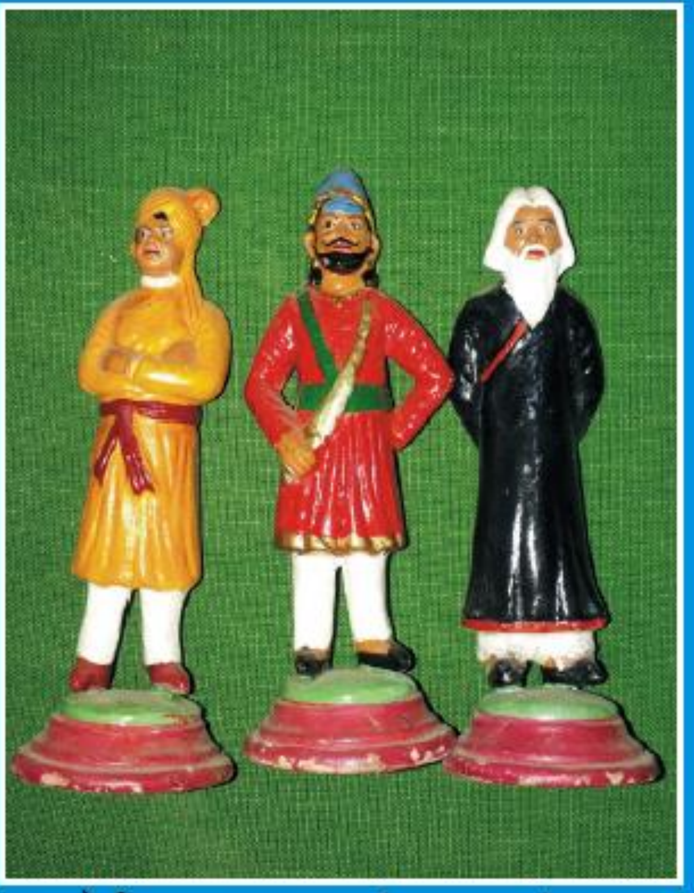

12 सेमी.   महापुरुष (कलकत्ता)   2010

7 सेमी.   साधू–संत (बनारस)   1995

10 सेमी. राजदरबार (पूना) 2000

8 सेमी. नृत्य–वादक (आगरा) 1965

18 सेमी.   मातृत्व (सोनपुर, उड़िसा)2002

15 सेमी.   संगीतज्ञ (गोरखपुर, उ.प्र.)   2005

16 सोनी. गगराग(सरगुजा,छत्तीसगढ़) 2008

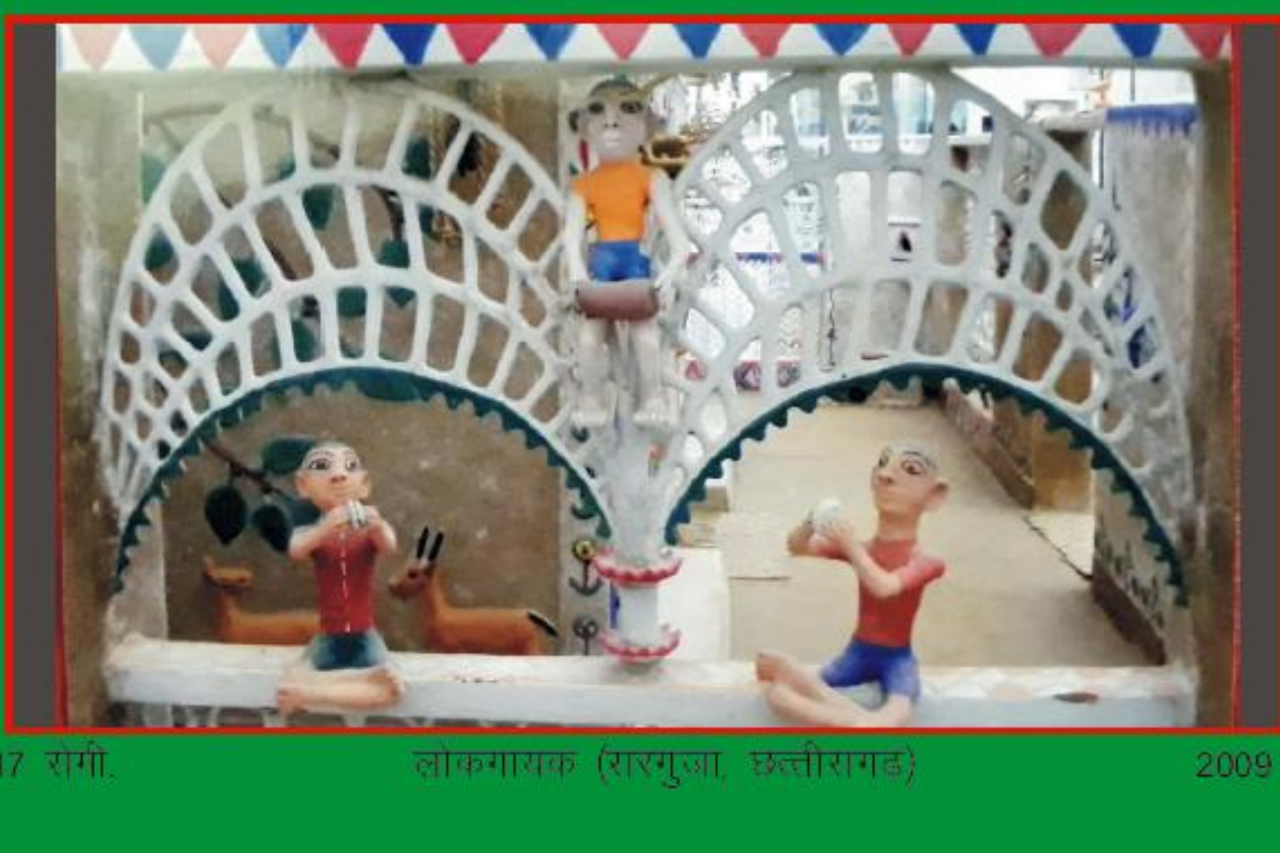

17 सोनी. लोकगायक (सरगुजा, छत्तीसगढ़) 2009

खिलौना कार्यशाला, चित्रकला विभाग, डी.ए–वी. कालेज, कानपुर (2013)
संयोजक : डॉ. हृदय गुप्त

मिट्टी के साँचा

पकी मिट्टी 70वाँ दशक

कानपुर के कुम्हारों की सूची

बाल गोविन्द प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
कृष्ण कुमार प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
सोनू प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
सूरज पाल प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
लल्लू प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
बिन्दा प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
राजाराम प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
शानू प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
अमित प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
इतिवारी भगत प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
शिव प्रसाद प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
मेवालाल प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
श्रीमती मंझला प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
राजेन्द्र कुमार प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
सुनील कुमार प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
छेदी लाल प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)	खिलौना
राम स्वरूप प्रजापति	(कर्नलगंज)	खिलौना
मैकू	(कर्नलगंज)	खिलौना
राजेन्द्र प्रजापति	(बादशाही नाका)	खिलौना
गंगा दयाल	(बादशाही नाका)	खिलौना
पुत्तन	(नवाबगंज)	खिलौना
बंशीधर	(नवाबगंज)	खिलौना
सूरज प्रसाद	(फेथफुल गंज)	खिलौना

दिनेश	(मछरिया)	खिलौना
पुत्तन लाल	(रानीगंज, काकादेव)	खिलौना
परशुराम	(रानीगंज, काकादेव)	खिलौना

गणेश–लक्ष्मी

मंगल प्रसाद प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
ज्ञानेन्द्र कुमार प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
श्रवण प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
श्रीमती लज्जावती प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
जगदेव प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
राजकुमार प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
हरी ओम प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
राजेन्द्र प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
पप्पू प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
मुन्ना प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)
राम जानकी प्रजापति	(लक्ष्मीपुरवा)

उपरोक्त सूचीबद्ध कुम्हारों का यह पैतृक व्यवसाय है। इनके पूर्वज भी खिलौना बनाते थे। इसके अतिरिक्त और भी कुम्हार हो सकते हैं, जिनकी जानकारी उपलब्ध नहीं हो पायी है।

OOO

संदर्भ ग्रन्थ

पुस्तक :

- बसन्त निरगुणे, मिट्टी शिल्प (1993), मध्य प्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल
- वासुदेव शरण अग्रवाल, भारतीय कला (2007), पृथिवी प्रकाशन, वाराणसी
- अरविन्द कुमार सिंह, प्राचीन भारतीय मूर्तिकला एवं चित्रकला (2007), मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
- डॉ. पारसनाथ द्विवेदी, वात्स्यायन कृत, कामसूत्रम् (2004), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
- डॉ. रीता प्रताप, भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास (2008), राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
- एस.एस. विश्वास, विष्णुपुर (2006), भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, नई दिल्ली
- कमला देवी चट्टोपध्याय, भारतीय हस्तशिल्प परम्परा (1991), प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली
- राम प्रताप त्रिपाठी 'शास्त्री' (सम्पादक) सम्मेलन पत्रिका, कला अंक (1984), हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
- श्री राम नाथ 'सुमन' (सम्पादक), सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति अंक (1995), हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
- Kamala devi Chattopadhyay, Handicrafts of India (1995), Indian Council for Cultural Relations, New Delhi.

पत्रिका : सखी, नई दुनिया।

अखबार : दैनिक जागरण, हिन्दुस्तान, अमर उजाला, राष्ट्रीय सहारा, स्वतन्त्र भारत, आज।

OOO

डॉ. हृदय गुप्त

(प्रसिद्ध चित्रकार, मूर्तिकार एवं कला समीक्षक)
एम.एस-सी. (गणित), एम.ए. (चित्रकला), पी-एच.डी.

विशेष उपलब्धि :

- कृति **'फिफ्टी इयर्स ऑफ फ्रीडम-II'** पर राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय सम्मान - 1997 प्राप्त।
- **गिरिजादेवी नामित पुरस्कार**, द्वारा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ – 2019।
- **राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की 150वीं जयन्ती पर सम्मान**, द्वारा राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 2019
- **"उत्तर-मध्य सांस्कृतिक क्षेत्र की लोक कला-एक सिंघवालोकन"** पर शोध उपाधि।
- **'ट्राइबल/फोक आर्ट'** शोध-परियोजना, सांस्कृतिक विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा प्राप्त पर शोध कार्य।
- **"भारतीय शिल्पकारों का सामाजिक, आर्थिक उत्थान, अध्ययन, विश्लेषण एवं नीतिगति सुझाव"** यूनिवर्सिटी ग्रान्ट कमीशन (यू.जी.सी.) नई दिल्ली द्वारा प्राप्त मेजर रिसर्च प्रोजेक्ट पर शोध कार्य।
- प्रकाशित पुस्तक **पारिभाषिक दृश्यकला कोश**, चतुर्व्यूह प्रकाशन, गोरखपुर।
- मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल द्वारा प्रकाशित पुस्तक **"दृश्यकला के मूलभूत सिद्धांत, तकनीक और परपंरा"**।
- उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा प्रकाशित पुस्तक **"दृश्यकला कोश"** एवं **"चौक पूरना"**।
- राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर द्वारा प्रकाशित पुस्तक **'देशज कला"**।
- विद्या प्रकाशन, कानपुर द्वारा प्रकाशित पुस्तक **"उपला कला"**।

कला साधना :

आप एक निष्ठावान व समर्पित कालाकार है। कला के क्षेत्र में आप विगत 35 वर्षों से सक्रिय हैं। कला शिक्षक के रूप में आपने विशेष ख्याति अर्जित की है आपके अनेक शोध-पत्र, लेख एवं रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। आप कला शिक्षक ही नहीं कला साधक भी हैं। आपकी कृतियाँ राष्ट्रीय ललित कला अकादमी, नई दिल्ली तथा राज्य ललित कला अकादमी (उ.प्र.), आकाशवाणी, कानपुर, यूनाइटेड इंस्टीट्यूट ऑफ डिजाईनिंग एवं निजी संग्रहों में संग्रहित हैं। राज्य व राष्ट्रीय स्तर की अनेक प्रदर्शनियों में आपके चित्र व मूर्ति प्रदर्शित हो चुके हैं। आपने अनेक सामूहिक एवं एकल प्रदर्शनियाँ की हैं तथा कार्यशालाओं में आपकी सहभागिता निरंतर रहती है। राज्य स्तर की चित्र प्रदर्शनियों, कला-मेलों, संगोष्ठियों, व्याख्यानों एवं प्रदर्शन आदि के आप संयोजक भी रह चुके हैं। इसके अतिरिक्त आपने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली के निर्देशकों के निर्देशन में विभिन्न नाटकों में अभिनय किया है और मंच की बारिकियाँ सीखी हैं। आप पर लघु-शोध **"समकालीन कलाकार डॉ. हृदय गुप्त का व्यक्तित्व एवं कृतित्व"** डॉ. भीमराव अम्बेदकर विश्वविद्यालय, आगरा में हो चुका है।

सम्प्रति : सहा. प्राध्यापक, ललित कला विभाग, डी.ए-वी. कालेज, कानपुर (उ.प्र.)
स्टूडियो : 2/414, नवाबगंज, कानपुर - 208 002
निवास : एस 102, सनराइज अपार्टमेन्ट, 2ए/416, आजाद नगर, कानुपर - 208 002
: 09839805580, 09455805580

प्रकाशक
साहित्य रत्नालय
गिलिस बाजार, कानपुर - 208001
दूरभाष : (0512) 2353589, Email : triamitabh@yahoo.co.in

डॉ. हृदय गुप्त

मिट्टी के खिलौने